पांच बरस लम्बी सड़क

पांच बरस लम्बी सड़क

अनुवादिका
शान्ता

मूल्य   चार रुपये पचास पैसे

पहला संस्करण   १९६९

PANCH BARAS LAMBI SARAK Amrita Pritam
Fi tion Rs 4 50

क्रम
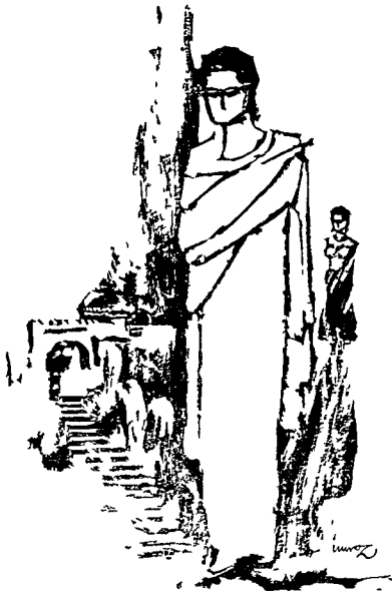
यात्री

औरत दुनिया की सबसे बडी स्मगलर है। मर्द कुछ भी करे, सिर्फ गाजे और अफीम जैसी चीजे ही स्मगल कर सकता है। ज्यादा से ज्यादा सोना स्मगल कर सकता है, या सरकारी भेद जैसी कोई चीज, बस इससे ज्यादा कुछ नही। पर औरत इन्सान के समूचे अस्तित्व को स्मगल कर सकती है। जब तक स्मर्गलिग का माल छुपा सकती है, कोख मे छुपाए रखती है, जब नही छुपा सकती, बता देती है, दिखा देती है—और वह भी किसी शर्मिन्दगी के साथ नही, बडे मान के साथ—स्मर्गलिग के कसब का हक कहकर। हक कहकर भी नही एहसान कहकर।—इन्सान पर इन्सान के वश को चलाए रखने का एहसान कहकर।

मेरी मा ने मेरे बाप पर यही एहसान करने के लिए भगवान् से एक बेटा मागा था—पहले हकीमो की दवाइयो से मागती थी, फिर फकीरो की जडी-बूटियो से, फिर अडोसन-पडोसन के बताए हुए जादू-टोने से, फिर करामाती कहे जाते पीरो-फकीरो की कबरो से, और फिर शिवजी के इस मन्दिर मे आकर शिवलिग से—और आखिर माग-मागकर उसने भगवान् को इतना तग कर दिया कि भगवान् को उसे बेटा देना ही पड़ा।

सोचता हू, भगवान् पूरा बनिया है। मा ने भगवान् से भी एक सौदा कर लिया था—तू मुझे एक बेटा दे दे मैं उसे तेरे इसी मंदिर म चढ़ा जाऊगी तेरी सेवा म अर्पित कर जाऊगी

अजीब सौदा है—मा न भगवान् पर भी एहसान कर दिया दख तरी सेवा क लिए मैं क्या दे रही हू। लाग मुट्ठी भर मक्की का आटा दत हैं या गुड चावल और नारियल चढ़ा देते हैं या ज्यादा से ज्यादा किसी चबूतरे और बावली पर सगमरमर मढ जात है या कलश पर साने का पतरा पर मैंने जाता-जागता एक बच्चा तेरी मूर्ति के आगे रखा है और उधर मेरी मा ने मेरे बाप पर भी एहसान कर दिया—कितनी मुसीबत झेलनी पडी पर आखिर मैंने तेरे कुल का नाम रख लिया तेरा वश खत्म होन नही दिया, और चाह तरे इस बटे का तर खेतो म जाकर हल नही जोतना है, बुढापे म तेरी लाठी भी नही पकडनी है पर तू कभी कभी उसे आखो से देखकर कलेजा ठडा कर सकता है—दुनियादार बेटो को सिफ देखा जाता है पर साधु बेटे के ता दशन किए जात हैं।

मा अक्सर यहा दशन करने आती है बाप सिफ सक्रान्ति वाले दिन या किसी पव पर। शायद इसलिए कि बहुत मुसीबतें मा ने झेली थी और उसी का महत्त्व जानने क लिए उसे एक प्रत्यक्ष सबूत की जरूरत पडती है और मैं बास बरसा का प्रत्यक्ष सबूत हू।

मुझे याद नही—चालीसा नहाने के बाद जब मेरी मा मुझे एक गरुए कपडे म लपटकर इस मन्दिर म चरान आई थी तो शिवमूर्ति के ठडे परा पर पडा मैं राया था या नही। (सुना है मा न अपनी मानता क मुताबिक मुझे पैदा होन ही गेरुए कपडे म लपेट दिया था।)

मन्दिर के मुख्य सत क्रिपाशागर जा न मेरे माथे का मूर्ति क परा म छुआकर मुझे फिर मा का झोला म डाल दिया था—"यह बालक

श्राज से शिव का पुत्र है, पार्वती इसकी मा, और तू इसकी धाय। एक वरस के लिए तुझे दूध पिलाने की सेवा सौंपते हैं। इसकी पहली वर्ष-गाठ पर यह वालक हमें लौटा देना।"

सो एक वरस के लिए मैं उधार सौंपा गया था। पता नही, इस एक वरस मे मैंने मा को मा कहकर पुकारा था या नही, शायद नही—क्योंकि मेरे होंठ इस शब्द से परिचित नही लगते।

अनुमान लगाता हू कि अपनी पहली वर्षगाठ को जव गेरुआ चोले मे घुटनो-घुटनो चलते, मैंने मन्दिर की मूर्ति के पैरो मे पड़े हुए फूलो के पास पहुचकर, किसी फूल को उठाकर खाने के लिए मुह मे डाला होगा, और मेरे गले ने फूल के स्वाद को कवूल न किया होगा—तो मै जरूर रोया होऊँगा। (मन्दिर का वूढा सेवादार साईं भगतराम वताता है कि फूलो की पत्तिया मेरे तालू से चिपक गई थी, और मेरा सास रुक गया था। उसने मेरे मुह मे उगली डालकर वे पत्तिया निकाली थी, और फिर मुझे वहलाने के लिए महत जी ने खुद एक कटोरी मे दूध और वताशा डालकर मुझे मूर्ति का प्रसाद चखाया था।)

शायद कुछ दिन टुकुर-टुकुर सवके मुह की तरफ देखा होगा—साईं भगतराम के मुह की तरफ, गोविन्द साधु के मुंह की तरफ, महत किरपासागर के मुह की तरफ, शिव की मूर्ति के मुह की तरफ, पार्वती की मूर्ति के मुह की तरफ और मन्दिर में आकर माथा टेकने वाले भक्तो के मुह की तरफ—कुछ याद नही। ये सारे मुह चिरकाल से परिचित लगते है।

मन्दिर मे एक गुफा है। कहते है, यह गुफा यहा कागडा घाटी मे से निकलकर कैलास पर्वत पर पहुचती है। पर अव कोई इस गुफा मे से गुजरा नही। जाने वाले जव जाते थे, इस वात को सदिया गुजर गई है। यह गुफा कई सौ मील लम्वी है, यह सिर्फ एक कथा है। कथा का इधर का सिरा सामने दिखता है—गुफा का मुह। उधर का सिरा

कोई नही जानता। पता है—मैं भी नही जान सकूगा, पर लगता है, जसे मैं इस सकडा मील लम्बी गुफा म कुछ मील रोज चलता हू। पहुचता कही नही सिफ चलता हू। अधेरा इसके गोल मुह पर भी पुता हुआ है—और दूर अन्दर भी।

मा शब्द को सिफ इस कहानी को चलाने के लिए बरत रहा हू वसे इस शब्द स मेरा कोई वास्ता नही। मन्दिर मे बहुत सी औरतें आती हैं वह भी आती है। मन से उसको वह औरत ही कह सकता हू मा नहीं। यह शब्द एक मजाक लगता है—मेरे साथ तो लगता ही है उसके साथ भी। बिल्कुल उसी तरह जसे बेचारी पावती के साथ।

कई बार रात के अधेरे म मैं अपनी कोठरी स निकलकर मन्दिर क उस हिस्से मे चला जाता हू, जहा शिव और पावती की आदमकद मूर्तिया है। वह दोना मुझे बडे स्थिर और आराधना म लीन एक बूढे किसान और एक अधेड औरत की तरह खडे लगत है—भगवान म एक बटे की मुराद मागत हुए। बिल्कुल उसी तरह जिस तरह मरी मा और मरा बाप किसी दिन इसा तरह एसे ही खड होकर भगवान स प्राथना करते रह होंगे।

मैं दोना मूर्तियों के सामने खडा हो जाता हू जस हस रहा होता हू—तुम्ह एक बेटे की बहत कामना है? अच्छा, मैं अपने आप का दान दता हू

मूर्तिया दो भिखारियो की तरह लगती हैं और अपना आप—भिक्षा की वस्तु।

नही मैं भिक्षा की वस्तु भी नही, सिफ भिक्षा का एक पात्र हू। वस्तु म एक रग, एक स्वाद, एक महक शामिल होती है। और सबसे ज्यादा एक सन्तुष्टि शामिल होती है मुझम वह कुछ भी नहा। मैं सिफ

एक पात्र हू—वस्तु को ढोने वाला। वस्तु एक तसल्ली है—जो मा नाम की एक औरत को मिली है, और बाप नाम के एक मर्द को मिली है, या शिव-पार्वती को मिली है, जिनकी मूर्तियो वाले इस मन्दिर की शोभा बढ गई है—कि इस मन्दिर से बेटो की मुराद मिलती है।

मेरा ख्याल है—महत किरपासागर जी सचमुच दूरन्देश है। उन्होने मेरे जन्म के समय ही मेरे मन की उस अवस्था का अनुमान लगा लिया था, जो कुछ सोच और समझ आने पर मेरे अन्दर पैदा हो जानी थी। इसलिए उन्होने एक सक्रान्ति वाले दिन मेरा नाम रखा था—किरपापात्र।

किरपापात्र या भिक्षापात्र एक ही बात है। एक तरह से हम सब भिक्षा पर ही पलते है—सिर्फ मै नही, साई भगतराम भी, गोविन्द साधु भी। महत किरपासागर भी। हाथ फैलाकर कोई भी किसी से कुछ नही मागता, सब पैरो के जोर से मागते है—कभी अपने पैरो के जोर से, और कभी उनसे बहुत तगडे शिव-पार्वती के पैरो के जोर से—भक्तजन जो कुछ देते है, शिव-पार्वती के पैरो पर रख देते है, कई महत जी के पैरो पर भी रख देते है, कोई गोविन्द साधु के पैरो पर भी रख देता है, और कोई-कोई साई भगतराम के पैरो पर भी—मेरे पैर भी पैरो मे शामिल हो रहे है—हम सब जैसे हाथो का काम पैरो से ले है···

पर भिक्षापात्र होने का ख्याल सिर्फ मुझे आता है। पता नही ो। शिव-पार्वती तो खैर बोल नही सकते, महंत जी के मुह से भी ऐसी त मैने कभी नही सुनी। गोविन्द साधु गूगा है, उसके कुछ बोलने का ाल ही नही उठता, पर उसके मुह से भी नही लगता कि वह किसी ज को भीख समझता हो—बल्कि बादामो की ठडाई अगर कभी उसके स्से नही आती तो वह घूरकर सबकी तरफ देखता है। साई भगत-

राम तो बिल्कुल अलबेला है, वह बाजरे की सूखी रोटी भी उसी स्वाद से चबा जाता है, जिस तरह गिरी की पंजीरी। सिर्फ मेरे गले में कुछ अटका हुआ है—और हर ग्रास के साथ चुभ सा जाता है।

डेरे के नाम पर सिर्फ चार कोठरियां हैं—एक महंत जी की, एक मेरी, एक गोविन्द साधु और साईं भगतराम की और एक आने जाने वाले साधुओं के लिए। इन कोठरियों की झाड़ बुहार साईं भगतराम के जिम्मे है। मन्दिर इन कोठरियों से बिल्कुल अलग है—एक पथरीली पगडंडी को लांघकर पहाड़ के एक वक्ष में बना हुआ। एक छोटी सी पानी की नहर मन्दिर के पैरों में बहती है। इस नहर के साथ चौतरे की और पथरीली पगडंडी की सफाई भी अक्सर साईं भगतराम ही करता है। (वैसे यह गोविन्द साधु के जिम्मे है) मन्दिर के फर्श को धोना और पोंछना मेरे जिम्मे है—मुझसे पहले शायद महंत जी के अपने जिम्मे था—और लगता है इस काम से हम सब भिक्षा के शब्द को अपने मे से झाड़ देते हैं। सबसे मेरा मतलब है—सारे, सिवा मेरे।

मन्दिर पत्थरों या ईंटों से बनाया हुआ नहीं एक बहुत बड़ी चट्टान को बीच में से खोदकर बनाया हुआ है। चट्टान का ऊपर का हिस्सा छत की तरह है, नीचे का हिस्सा फर्श की तरह। इसके अन्दर की मूर्तियां भी कहीं बाहर से लाकर रखी हुई नहीं, बीच के पथरीले हिस्से को ही तराशकर बनाई हुई हैं। और बाहर से जो नदी गुजरती है वह पहाड़ के पिछले हिस्से में से ऐसे आती है कि उसका कुछ पानी चट्टान के ऊपर के हिस्से से टपककर बूंद बूंद कर मूर्तियों के शरीर पर गिरता रहता है। मूर्तियां रोज धुली हुई होती हैं—लगातार पड़ते पानी से सीलन की एक पतली सी परत उनपर जम जाती है जिसे रोज एक मोटे कपड़े से मलकर उतारना होता है। और लगता है—भिक्षा का शब्द भी बूंद-बूंद गिरते पानी की तरह दिन रात मेरे जिस्म पर पड़ता रहता है। मैं

किसी भी ख्याल के मोटे कपडे से मलकर उसे उतारू, वह तव भी एक सीलन की पतली परत की तरह मेरे ऊपर जमा रहता है। रोज जम जाता है।

महत किरपासागर जी से निजी तौर पर मुझे कोई शिकवा नही—उन्होने अपने लिए आए चढावे में से हिस्सा निकालकर मुझे पाला है, पढाया है—सिर्फ शिकवा है तो उनके सागर होने से, और अपने पात्र होने से।

शिकवा भी नही, नफरत है।

और यही नफरत उस मा नाम की औरत से है जिसने इस पात्र को अस्तित्व दिया है। यह नफरत इस हद तक है कि वह जव भी मन्दिर के दर्शन के लिए आती है, मैं किसी वहाने मन्दिर मे वाहर चला जाता हू। कभी वह मेरी कोठरी की दहलीज रोक ले, और अपने पल्लू मे बधी हुई अखरोट की गिरिया जवरन मेरे मुह मे डाल दे, तो उसकी पीठ मुडते ही मैं मुह में से वे गिरिया थूक देता हू।

वाप नाम के मर्द को जव देखता हू—वह अपने वश की रखवाली करता हुआ एक प्रेत-सा लगता है।

किरपासागर जी के गाल मुझे दो लाल पके हुए फोडो की तरह लगते है, जिनपर एकदम पुल्टिस वाधने का ख्याल आता है ··

मा—धीरे-धीरे चलती हुई जव एकदम सामने आ जाती है—वह मुझे पजो के वल चलती हुई विल्कुल एक विल्ली लगती है, जो अभी एक चूहे की गर्दन दवोच लेगी ···

वाप—दुवला-पतला-सा और सिर को कन्धो के ऊपर एक वोझ-सा डालकर चलता हुआ मुझे खेतो मे गाडे हुए 'डरने' की तरह लगता है ·· और मैं चिडियो-कौवो की तरह उससे डर जाता हू ··

एक सावारण आख से शायद यह सव कुछ नही दिख सकता, पर मुझे

पता है, मेरा आखों मे नफरत की डोरिया पडी हुई हैं

गोविन्द साघु जब बूटी रगडकर पीता है उसकी आखा म भी लाल डारिया पड जाती हैं और वह लाल डारियो वाला आखा स जब मुझे देखता है—मैं उस बीस बरस का एक जवान आदमी नही जवान औरत नजर आता हू

तीन चार साल हो गए, गोवि द साधु ने एक दिन अपनी तोरी जसी लटकती टागा पर बादाम रोगन की मालिश करते हुए जबरदस्ती मेरी बाह पकड ली थी और वह मेरी पीठ पर और टागा पर बादाम रोगन की मालिश करने लगा था। मुझे बिल्ली कुत्ता या काई भी जानवर अच्छा नही लगता, उसके लम्बे लम्बे हाथ मुझे कुत्ते के पौंचो की तरह लगे थ मैंने जब छूटने के लिए जोर लगाया था तो उसने अपनी पूरी ताकत मे मुझे एक चौड पत्थर पर गिराकर । मैं बडे जार स चिल्लाया था—इतने जार से—कि अन्त म किरपासागर जी यह आवाज सुनकर वहा पहुच गए थे। उन्होंने पास ही पड हुए बूटी रगडने वाले डडे स गावि द साधु का ऐसे पीट डाला था — जस वह गाविन्द साधु को भी बूटी की तरह ही रगड देंगे। उस दिन के बाद गाविन्द साधु न मुझस कुछ नहा कहा, बल्कि मैं दापहर के समय जिस पड के नीचे बठकर पढ़ता हू, वह वहा से घूमकर दूर जा बठता है। पर यह मैं अब भी देख पाता हू—वह जिस दिन बूटी रगडकर पी ले, और उसकी आखो म लाल डोरिया पड जाए वह उनकी कोरा म स मुझ आते-जाते ऐसे दखता है—जस मैं उसको बीस बरस की एक जवान औरत दिखता होऊ

पर उसस मुझे नफरत नहा। वह खुजली के मारे हुए कुत्ते की तरह लगता है। कुत्त स कोई रास्ता काटकर निकल सकता है तो उस एक ग्लानि भी हा सकती है पर उसके खून म नफरत नहीं खौलती।

इस तरह साइ भगतराम एक खस्सी (बधिया) जसा लगता है, जिसस

किसी गाय को कोई खतरा नही। इसलिए उससे भी कोई नफरत नहीं होती।

नफरत के पात्र सिर्फ वे है जिन्होने अपनी झोलियो मे दान-पुण्य भरा हुआ है—और या भिक्षापात्र—मैं स्वय।

दो

नफरत······नफरत ··· नफरत······चिडियो का एक झुण्ड अभी चहकता गुजरा है। शायद उधर की दीवार के पास साई भगतराम ने दाल-चावल सूखने के लिए डाल रखे थे, चिडियो ने उसे चुग्गा समझ लिया था, और साई ने या गोविन्द साधु ने अपना घुघरू वाला डडा खडका दिया था कुछ आवाज़-सी आई थी, और फिर चिडियो का झुण्ड मेरे ऊपर से चहकता हुआ गुजर गया। सब चिडिया जैसे चहक रही थी—नफरत··· नफरत···नफरत··

यह शब्द शायद बहुत बडा है—चिडियो की चोच मे पूरा नही आ रहा था, पर वे इसी शब्द को बार-बार दुहरा रही थी—जितना भी उनकी चोच मे पकडा जा रहा था···

डेरे में परसो से मूसलनाथ का डडा फिर खडक रहा है। वह बरस में एक-आध फेरा जरूर लगाता है। फिर उन दिनो मे रोज़ भाग का दौर चलता है। बहुत छोटा था, जब वह मुझे झोली मे बिठाकर—नही, बिठाकर नही, झोली मे दबोचकर कहता था, "तुझे नाथ जोगियो के नाम आते है ? जो तू बिना भूले सारे नाम सुना दे तो मैं तुझे इलायची और मिश्री दूगा···" इलायची और मिश्री के लिए नही, पर उसकी झोली मे से छूटने के लिए मै जल्दी से जोगियो के नाम दुहरा देता था—आदिनाथ,

महेन्द्रनाथ, उदयनाथ, सन्तोषनाथ, कथडनाथ सत्यनाथ अचम्भनाथ चौरगीनाथ और गोरखनाथ। वह झोले म से इलायची मिश्री निकालने लगता तो मैं उसकी बाहो से छिटककर परे जा खडा हो जाता था और जोर स कहता था—और तेरा नाम मूसलनाथ। मुझे पता था उसका नाम नील बाबा है पर उसके हर समय डडा पकडे रहने के कारण मैंने उसका नाम रख लिया था—मूसलनाथ। "बन्द तेरे का" कहता हुआ वह इलायचा और मिश्री का फिर मुट्ठा म भीच लेता था और मुझे अपनी बाहो म दबाचने क लिए आगे बढता था। इतने म मैं दौड जाता था।

आज पता नही क्यो, ऐसा लग रहा है कि अगर वह आज एक बार मुझे फिर झोली म दबाचकर जोगियो के नाम पूछे तो सारे नाम बताने क बाद मैं सिर्फ यही कहूगा—तेरा नाम मुझे मालूम नही पर मेरा नाम है—भिक्षानाथ। अपने आपसे इससे बडा मजाक मैं और क्या कर सकता हू

सिद्ध मकरध्वज बनाने का नुस्खा सिर्फ नील बाबा का माना है, पिछले बरस उसने महत जी को बनाकर दिया था, सारा साल उन्ह जाडा का दद नही हुआ था। इस बरस वह फिर बना रहा है और इस बरस उसन महत जी के कहने पर मुझे उसका नुस्खा लिखा दिया है—सोना आठ तोले, पारा एक सेर, आंवलेसार गधक दो सेर। इन तीनो चीजो का पहले लाल कपास के फूलो के रस मे फिर घीकुमार के रस मे घोटकर आतशी शीशी म डालकर मुह पर खडिया मिट्टी लगाकर, और मुल्तानी मिट्टी क पाचे कपडे की सात तहें बोतल पर लपटकर सुखा लेना। इस शीशी का एक हाडी मे सीधा रखना, और उसके चारा तरफ बालू रेत भर देना। बत्तीस पहर आग की एकसार आच देना। फिर बोतल के मुह पर उडकर जो लाल पदाथ जम जाएगा—वही मकरध्वज होगा

और नील बाबा ने यह नुस्खा सिखाते हुए मेरे कान को मरोडकर

ा था—अनाडी हकीम की तरह कुछ कच्चा-पक्का किसी को न खिला
ना। पारा कच्चा रह गया, तो खाने वाले की हड्डिया गल जाएगी…

ज़बान रोक ली थी, नही तो जबान से निकलने लगा था—मूसल बाबा !
भक्षा भी कच्चे पारे की तरह होती है, खाने वालो की हड्डिया गल जाती
। ।

पारे को शिव-धातु कहते है, भिक्षा को पता नही क्या कहते है…
भक्षा को मा-धातु कहना चाहता हू ।

वह मेरी मा आज भी आई थी। दबे पाव चलती हुई वह मेरी कोठरी
क आ गई थी । वह जब दुबककर आती है, मुझे हमेशा एक बिल्ली का
याल आता है। कल सारा दिन यही ख्याल आता रहा था—सारा दिन
मारे डेरे मे एक बिल्ली को पकडने की भाग-दौड होती रही थी। एक
कोठरी में दूध की कटोरी ऐसे दहलीज के पास रख दी गई थी, कि बिल्ली ने
जब कटोरी को मुह मारा था, बाहर ताक के पीछे खड़े साईं भगतराम ने
तुरन्त दरवाजा भिडका दिया था। बिल्ली कोठरी में बन्द हो गई थी। पर
जब दूसरी कोठरी मे से बीच के दरवाजे को खोलकर, बिल्ली को पकड़ने
का यत्न किया गया तो वह उछलकर खिडकी के ताक से ऐसे जा लगी
कि खिड़की की पतली-सी कुडी टूट गई, और बिल्ली उस खिड़की में से
बाहर कूद गई। लेकिन आखिर डेरे के तीन साधु उसके पीछे पडे हुए थे,
शाम तक उन्होने बिल्ली को पकड़ ही लिया—और आज उस बिल्ली को
मारकर उसकी एक हड्डी को त्रिफले के पानी मे पीसा जा रहा है।
गोविन्द साधु को पिछले दिनों से एक फोडा हो गया है। गील बाबा कहते
हैं कि यह भगंदर है, और उसके ऊपर लगाने के लिए बिल्ली की हड्डी का
लेप तैयार करना है।

कल सारी रात मैं सपने में एक बिल्ली पकडता रहा था—हालाकि
दिन में बिल्ली पकड़ने के लिए मैंने किसी का साथ नहीं दिया था—पर

सपने मे मैं ऊचे नीचे पत्थरा पर मे गुजरता एक बिल्ली के पीछे-पीछे दौडता रहा—और अजीब बात थी कि मेरे आगे आगे दौडने वाला चीज कभी एकदम बिल्ली बन जाती थी कभी मेरी मा

मुझे पता नही भगदर फोडा क्या होता है, उससे कस पीप बहता है, और उसमे कसे टीसें उठती हैं—पर मेरी हड्डियों म एक दर्द है एक एक हड्डी म एक एक जाड म, एक एक ख्याल म

और बडा ही भयानक ख्याल आया है—मन के इस फोडे पर लेप करन क लिए अगर मा की पसली को पीसकर

मनु ने इक्कीस नरक माने हैं, ब्रह्मवैवर्त म छियासी नरक कुण्ड लिखे हुए हैं—और मरा यकीन है उनम स एक नरक कुण्ड जरूर मेरे मन की हालत जसा होता होगा ।

तीन

गोविन्द साधु को शील बाबा की दवा से शायद सचमुच आराम हो गया है—आज उसका घुघरू वाला डडा फिर उसकी पत्थर की कूडी मे छनक रहा है । वह भाग घोट रहा है और उसका गूगापन भी घुघरू वाले डडे की तरह छनक रहा है । 'दे रगडा मस्त कलदर दे रगडा ' यह बोल उसे साई भगतराम ने सिखाए थे—जो उसके गल म स छनकर बन जाते है— गे ग' ग

पता नही यह घुटती हुई भाग की ठडी-सी गध है या कुछ और—अचानक मुझे ठड सी लगने लगी है । पर ऐसा कई बार लगता है, बठे-बठे लगन लगता है—कई बार धूप म बठे हुए भी और कई बार रजाई मे सोते हुए भी

वहुत छोटा था, स्कूल पढने के लिए जाता था, तो एक दिन मेरा सहपाठी रुलिया स्कूल से लौटते वक्त मुझे अपने घर ले गया—आदर की चीज़ था, इसलिए रुलिये की मा ने मेरे वैठने के लिए मूढा डालकर, मूढे पर खेस विछा दी थी। और मैं सारे घर मे एक अलग-सी चीज़ की तरह उस मूढे पर वैठ गया था।

रुलिया के लिए उसने मूढा नही विछाया था। वल्कि उसने उसे झिडककर उसकी वाह अपनी तरफ खीची थी—"यह मुह पर तूने स्याही कहा से लगा ली ?" और अपने दुपट्टे के पल्लू से उसने रुलिये का मुह रगडकर पोछा था। मूखे पल्लू से स्याही नही छूटी थी, इसलिए उसने कन्नी को थोडा-सा थूक लगाकर, उस कन्नी को रुलिये के मुह पर रगडा था।

रुलिया उससे वाह छुडाकर और हाथ मे पकडे हुए वस्ते को जल्दी से कही रखकर, मेरे साथ जाने के लिए आतुर था, पर उसकी मा ने फिर डाट दिया, "जाता कहा है भूखा पेट लेकर, वैठ जा सीधा होकर, निकम्मी औलाद !" और फिर उसी पल वडे दुलार के कहने लगी—"किसी को घर लाकर कोई भूखा थोड़े ही भेजा जाता है ? वेअकल, अभी मैं गर्म-गर्म रोटी पका देती हू, तू भी खा और अपने दोस्त को भी खिला···" और उसने रुलिये को समझाते हुए उसका माथा चूम लिया था।

एक औरत नही, जैसे एक फिरकी माथा चूम रही थी।

चूल्हे में अधजली लकड़ियो का धुआ सारे घर मे घूम रहा था। रुलिया ने जव अपना वस्ता फेका था तो उससे एक किताव उधर गिर गई थी। रुलिया का छोटा भाई खटोले पर सोता हुआ अचानक रोने लगा था, उसके मुह पर वैठी मक्खियो ने शायद वहुत जोर से भिन-भिन की थी। रुलिये की मा ने जैसे एक हाथ से चूल्हे को हवा की और

दूसरे हाथ से रलिय की वस्त से गिरी किताब को उठाकर पहले माथे से लगाया और फिर बस्ते मे रखा, और एक हाथ से खटाल पर रो रहे बच्चे क मुह पर से मक्खियो को उडाया लग रहा था कि शिव के तीन नेत्रो की तरह रलिया की मा क तीन हाथ थे

बडा मला घसमला सा घर था—पर लकडियो की तिड तिड म से, मक्खियो की भिन भिन मे मे रलिया की पडती झिडकियो म से, और रलिया क मुह को चूमती उसकी मा क थूक म घुल मिलकर एक सेंक-सा उठकर मेरी तरफ आने लगा था—एक गर्माई सा

मैं फिर कभी रलिया क घर नही गया पर कभी कभी अचानक बैठे बठे या सोत हुए मुझे ठड सी लगती है, और पता नहीं क्यो मुझे बचपन की वह बात याद आ जाती है

चार

कल शिवरात्रि का मा ने व्रत रखा था पूजा क लिए महत किरपा-सागर जी को बुलाया था। सुना है कि उनको यह ताकीद भी कि पूजा क समय मैं भी जरूर उनके साथ माऊ।

मुहूत टालने क लिए मैं मंदिर क पिछवाड जगल म इस तरह छुप गया था कि अगर व मुझे ढूढते तो पूजा का मुहूत गुजर जाता।

पता लगा कि वह पूजा क वक्त रोए जा रही थी

आज साइ भगतराम ने उसक वह गम्भा म एक बात बताई—"इस सडक का रगो मे खून की जगह पानी भरा हुआ है।"

सुनकर हसी-सी आ गई है। मेरा ख्याल है, उसने ठीक कहा है। पद्मपुराण मे एक कथा आती है कि मार्कण्डेय ऋषि जब तप कर रहा था,

तो आसपास खाने के लिए पत्तो के सिवा कुछ न था। सो वह बर
तक पत्ते खाता रहा, और उसके शरीर में खून की जगह हरे पत्तो
रस भर गया। ऋषि ने जब अहकार से भरकर यह बात महा
को बताई तो महादेव ने उसका अहंकार तोड़ने के लिए दिखाया
उनके शरीर मे खून की जगह भस्म भरी हुई है। भला अगर
ऋषि की नाडियो में खून की जगह पत्तो का हरा रस हो सकता है, अ
महादेव की नाडियो मे भस्म, तो मेरी नसो मे ठडा पानी क्यो नही
सकता ? आखिर मैंने अपने जन्म से लेकर अब तक मन्दिर वाली न
का पानी पिया है···

पां

आज फिर मुझे हसी-सी आ रही है। हसी पता नही क्या होती
पर जो कुछ आई थी शायद हसी ही थी।

मैं शिव जी की मूर्त्ति के पास खडा था। यह प्रार्थना का समय थ
मन्दिर की दहलीजो मे से गुजरते हर किसी का हाथ लोहे के घण्टे
एक बार जरूर छू लेता था, और घण्टे की आवाज़ प्रार्थना के बो
से टकरा रही थी—आवाज बहुत भारी थी, इसलिए वह साबुत श
सिर्फ बोल टूट रहे थे ·

जै जै जै जै जै त्रिपुरारो
कर त्रिशूल सोहत छवि भारी
शारद नारद शीश नवाय
नमो नमो जै नमोशिवाय···

और मैंने देखा—सामने मेरी मां मूर्तिया के आगे दोनों हाथ जोड़े खड़ी थी। पत्थर की छत से छनकर बूंद-बूंद पानी मूर्तिया पर भी गिरता रहता है और दालों पर भी। उसके सिर के पल्ले पर भी पड़ रहा था—और वह बिल्कुल भीगी हुई बिल्ली की तरह लग रही थी—पर हंसी इस बात पर नहीं आई थी—इस बात पर आई थी कि आज उसने अपने बालों को मेहंदी से रंगा था। मेहंदी का ख्याल मुझे बड़ी देर बाद आया यह याद करके कि कुछ दिन हुए उसने मेरे सामने माथे की नन पटिया को दबाते हुए साइं भगतराम से सिरदर्द का इलाज पूछा था और साइं ने उसे मेहंदी पीसकर सिर पर लगाने के लिए कहा था। पर अचानक जब उसके बाल लाल से देखे—तो मुझे लगा वह आज काली और सफेद बिल्ली की जगह अचानक भूरी बिल्ली बन गई थी और वह बिल्ली की तरह म्याऊं म्याऊं करती लग रही थी—

> कीन्हो दया तहाँ करी सहाई
> नीलकंठ तब नाम कहाई
> प्रगटे उदधि मथन म ज्वाला
> जरे सुरासुर भये बेहाला

जिस्म म एक कपकपी सी आ गई—याद आया बहुत छोटा था अभी अलग कोठरी म सोने लायक नही था। चार बरस का होऊंगा महंत किरपासागर जी की कोठरी म बिछे उनके आसन के पास ही एक चटाई पर सोता था, और अचानक एक रात आंख खुल गई थी—सामने जो कुछ दिखा था उसे देखकर घिघियाकर रो पड़ा था। वह तो आदमकद कोई चीज़ थी पर उस वक्त वह सारी कोठरी मे फैली हुई लगती थी—एक बहुत बड़ा और स्याह काला मुह था जिसपर दोनो आख सफेद और

लाल रग मे जलती दिख रही थी। सिर पर कुछ हरे-हरे पख झूल रहे थे।

महत किरपासागर जी ने मुझे उठाकर अपनी गोद मे ले लिया था, पर मै रोए जा रहा था, और कापे जा रहा था।

"तू उसे हाथ लगाकर देख, यह तुझे कुछ नही कहेगा" महत जी ने एक वार मुझे अपनी गोद से हटाकर उसकी तरफ करना चाहा था, मेरा डर उतारना चाहा था, पर उसकी तरफ देखते ही मेरी फिर चीख निकल पडी थी।

सवेरे दिन के उजाले में, वाहर पेडो की खुली जगह पर, महत जी ने मुझे विठाकर, और उसे भी सामने विठाकर मुझे समझाया था—"यह वडा अच्छा आदमी है, दीवाना साधु, हरिया बावा।"

वहुत देर वाद मुझे समझ आई कि साधुओ का एक समुदाय दीवाने साधु कहलाता है, और इस समुदाय के सारे साधु मुह पर काला रग मल कर, सिर पर मोर के पख टूग लेते है।

पर उस रात की भयानकता वडी देर तक मेरी याद में अटकी रही थी—एक कुछ वहुत काला-सा, मेरी आखो के आगे फैला हुआ, और उसमे मोर का एक रग-विरगा पख हिलता हुआ ··

आज की इस घटना से पता नही उसका क्या सम्वन्ध था—मा के मेहदी रगे वालो को देखकर मुझे मोर का पख याद आ गया। लगा मेरे सामने एक वहुत वडा खालीपन है—और उसी काले खालीपन मे मेहदी रग का एक गुच्छा लटक रहा है—मोर के पख की तरह।

उसके होठ वरावर फडक रहे थे—

स्वामी एक है आस तुम्हारा
आय हरो मम सकट भारा

शकर ही सकट के नाशन
सकट नाशन विघ्न विनाशन

मा की आखो के आगे पतली पतली झुरियो का एक जाल-सा फैला हुआ है। आखें उस जाल म फसी हुई लग रही हैं नहीं तो कई बार ऐसा लगता है अगर वे जाल म फसी हुई न हो तो उसके मुह से उडकर सीधा मेरे मुह पर आकर बठ जाए

पर काले और फले हुए खालीपन म ये आखें मुझे कभी-कभी ही दिखती हैं नहीं तो काला और फला हुआ यह खालीपन बडा अडोल होता है। सिफ आज यह लग रहा है कि उस खालीपन म महदी रगे बालो का गुच्छा लटक रहा है—मोर के पख की तरह।

छ

भुलावा एक बार हो सकता है, दो बार हो सकता है, पर यह जो रोज—आए दिन—लगता है—यह शायद भुलावा नही होगा

प्रभात का समय था। पूजा के समय मदिर मे खडा था, मूर्तियो के बिलकुल पास था इसलिए मूर्तियो के चरणो म चढाए हुए फूल मेरे परो तक भी पहुचे हुए थे और फिर सुन्दरा ने फूलो की एक माली इस तरह पलटी कि मेरे परो पर उनके नीचे ढक से गए। और फिर जब सुदरा ने जमीन तक माथा झुकाकर मूर्तियो को प्रणाम किया तो लगा कि उसका एक हाथ मेरे पर को छू रहा था।

जरा-सा चौंककर मैंने आखें नीची कर ली—अपने परो की तरफ—

पर पैरो के ऊपर, और पैरो के गिर्द, फूलो का इतना ढेर था कि न अपना पैर दिखता था न उसका हाथ।

यह भुलावा भी हो सकता था, इसलिए इस बात की तरफ फिर कभी ध्यान नही दिया। पर यह जिस दिन की बात है, उसके तीन-चार दिन बाद सक्रान्ति थी। रोज़ मन्दिर मे न इतने भक्त आते है, न इतने फूल चढते है, पर सक्रान्ति वाले दिन, पूर्णिमा वाले दिन, अमावस वाले दिन, या और किसी ऐसे दिन, छोटे-से मदिर का सारा चबूतरा फूलो से भर जाता है। उस दिन, सक्रान्ति वाले दिन फिर ऐसा लगा था—सुन्दरा ने फूलो की एक झोली मूर्तियो के चरणो मे पलटी थी, और फिर मूर्तियो के चरणो मे सिर झुकाती हुई, फूलो के ढेर में से बाह गुजारकर, लगा, मेरे एक पैर पर अपने हाथ की हथेली रख दी हो।

मन का जोर-सा लगाकर, दूसरी बार की घटना को भी एक भुलावा कह लिया था। पर पूर्णिमा वाले दिन फिर ऐसे ही हुआ था, अमावस वाले दिन फिर इसी तरह, और इससे अगली सक्रान्ति वाले दिन··· कल फिर ·

उसने और कभी कुछ नही कहा। पर बहुत दिनो की एक बात है—तब मैंने इस बात को भी एक सयोग ही समझा था—पर यह शायद सयोग नही था ··

वह अपने खेतो की मेड पर चलती गाव की तरफ लौट रही थी। शाम का अधेरा इतना गहन हो गया था कि एक बार देखकर भी जो कोई अपने ध्यान मे हो जाए, तो यह नही पता लगता था कि किसी ने देखा या पहचाना था या नही। मैं अपने ध्यान मे नदी की तरफ जा रहा था। नदी बिल्कुल उसके खेतो के सामने पडती है—और फिर लगा वह भी नदी की तरफ लौट पडी थी।

कुछ आगे जाकर मैंने पीछे एक बार देखा था—वहा तक, जहां तक

लगा कि वह नदी के किनारे जाकर खड़ी हो गई। एक आवाज़-सी सुनाई दी जैसे वह नदी की तरह एक लम्बी आवाज़ में गा रही थी—

पीछे मुड़कर जरूर देखा था पर इस तरह नहीं कि उसको यह दिख जाए कि मैं उसकी आवाज़ सुनकर खड़ा हो गया था। एक पेड़ के तने के पास होकर जरा थम सा गया था।

देख सकता था—वह गा रही थी पर बिल्कुल अपने ध्यान में। नदी के किनारे पानी में हाथ लटकाकर कुछ धो रही थी—शायद खेतों से जो साग सब्ज़ी तोड़कर लाई थी उसे धो रही थी। अंधेरे में बहुत कुछ नहीं दिख रहा था। पर यह दिख रहा था कि वह बड़ी बेखबर थी न उस तरफ देख रही थी जिस तरफ मैं गया था न किसी और तरफ। सिर्फ जो कुछ गा रही थी, वह बड़ा अजीब था। उसकी पंक्तियां पूरन भक्त के किस्से में से थीं, पर वे पंक्तियां, जिनमें उसके नाम जैसा नाम आता है

> मैं भुल्ली हां, तुसी न हार कोई
> लाइयो जोगियां नाल प्रीत लोको[1]
> जंगल गये न बौहड़े सुंदरा नू
> जोगी नहीं जे किस दे मीत लोको[1]

पेड़ के तने के पास मैं कुछ देर खड़ा रहा था।

ये पंक्तियां न जाने क्या ठंडे पानी के छींटों की तरह लगी थीं।

---

१ मुझसे भूल हुई, तुम कोई यह भूल मत करना, तुम कोई जोगियों से प्रीत मत करना। मुझ सुन्दरां के पास वह फिर लौटकर न आया, वह ऐसा जंगलों में चला गया कि फिर वहां खो गया। जोगी किसी के दोस्त नहीं होते।

मैंने अपने कधे पर रखी हुई खद्दर की गेरुई चादर जरा कसकर दोनो कधो पर लपेट ली थी···

पर देखा था, वह फिर बेध्यान नदी के किनारे से लौट पडो थी—सीधी गाव को जाती हुई पगडडी पर। और लगा था—उसकी आवाज सयोग से मेरे कानो मे पड़ गई थी, उसने जान-बूझकर मेरे कानो मे नही डाली थी।

वैसे एक बात उस दिन रह-रहकर मेरी याद में अडती रही थी—बहुत साल हुए, जब मैं छोटा था, गाव की औरते जब कन्या जिमाती थी, मुझे मन्दिर मे से जबरन पकड़कर ले जाती थी, 'यह हमारा वीर लगूरिया' कहती थी, और मुझे छोटी-छोटी लडकियो की पगत मे बिठा देती थी।

और एक बार की बात है—इसी सुन्दरा की मा ने कन्याए जिमाई थी। उस दिन सुन्दरा ने सिर पर गोटे वाली लाल चुनरी ओढ रखी थी। उसके हाथ भी लाल थे, वह हम सबको अपनी हथेलिया दिखा रही थी—"देखो बल्ला जी, मैंने मेहदी लगाई है!" और सुन्दरा की मौसी ने सब लडकियो के पैर धोकर उनको जब मौली बाधी, और एक पंगत में बिठाया, तो मुझे सुन्दरा के पास बिठाती हुई जोर से सुन्दरा की मा से कहने लगी, "ओ बहन! जरा एक बार इधर देख। ये दोनो जने सुन्दरा और पूरन की जोडी लगते है। यह छोटा-सा साधु सचमुच किसी राजा का बेटा लगता है···"

छोटी-छोटी थालियो मे पूरी, हलवा और छोले देती हुई सारी औरते हस पडी थी। उस वक्त मुझे बिल्कुल पता नही लगा था कि वे क्यो हसी थी। सुन्दरा को भी पता नही लगा था ··पर फिर जब मैंने कुछ बरसो बाद 'पूरन भक्त' का किस्सा पढ़ा···तो फिर एक बार दशहरे के मेले में जब सुन्दरा सुसराल से आई हुई थी, और अपनी मौसी

की बेटी को भला दिखाती, अचानक मेरे सामने आ गई थी तो हसकर उसने अपनी मौसी की बेटी को कहा था— ले देख ले —मेरा पूरन मेरा जोगी ”

पर यह बहुत दिनो की बात थी। सिर्फ उस दिन रट रटकर मेरी यादें म उलझ रहा थी जिस दिन नदी के किनारे मैंने उसे बेसबर गाते सुना था—नदी की तरह लम्बी आवाज म वह कह रही थी— मैं भूली हू तुममे स कोई और जोगिया से प्रीत न लगाना

लेकिन फिर इस बात का भी एक अजाब सा सयोग समझ लिया था।

पर यह जो रोज—आए दिन फूलो के ढेर म छुपा हाथ मेरे पैर को छू जाता है

पैर कुछ देर के लिए सु न सा हो गया लगता है। किसी कथा-कहानी मे जसे कोई राजकुमारी फूल तोडने जाती है फूलो की किसी डाली को हाथ लगाती है डाली से लिपटा हुआ साप उसकी उगली को डस जाता है और वह वही मूर्च्छित होकर फूलो की भाडी म गिर पडती है—मेरा पैर भी फूलो के ढेर मे मूर्च्छित-सा हो जाता है

उसकी बाह एक सापिन की तरह फूलो के ढेर म फुकारती सी लगती है।

सात

आजकल महत जी का दाया गाल सूजा हुआ है। उनकी दो दाढें दुखती हैं। पर पूजा के नियम में उन्होंने कोई फर्क नही आने दिया। सिर्फ इतना फर्क पडा है कि श्लोको के सारे शब्द उनके मुह म दातो की तरह अटके लगते हैं—हिलते भी हैं पर बाहर नहीं निकलते।

साईं भगतराम आजकल दो वक्त उनके लिए लपसी बनाता है, सिर्फ पतली-पतली लपसी उनके अन्दर जा सकती है, और कुछ नही। पहले वे रोज सवेरे, रात की भीगी बादाम की गिरिया छीलकर और शहद मे डालकर खाते थे, पर अब गिरिया चबाई नही जा सकती, इस-लिए कुछ गिरियो को पीसकर लपसी में मिला लिया जाता है। वे नियम से जिस वक्त लपसी पीते है, एक कटोरी लपसी मुझे भी जरूर पिलाते है, अपने पास बिठाकर। जैसे शहद और गिरिया पहले रोज़ अपने पास बिठाकर खिलाते थे। सिर्फ यह पता नही लगता कि इस सब कुछ को मै जिस एक शब्द 'उनकी किरपा' से जोडना चाहता हू, वह जुडता क्यो नहीं··

रात जब वे सोने लगते है, साई भगतराम नियम से उनके पाव दबाता है। मैंने कई बार चाहा कि साईं भगतराम का यह नियम, मैं अपना नियम बना लू, पर उन्होने हर बार अपने हाथ के इशारे से मुझे पैरो की तरफ से हटा दिया। पता नही, उन्हे मेरी सेवा क्यो स्वीकार नही? वैसे *'सेवा' शब्द को लोग जिन गहरे अर्थो मे लेते है,* मैं इसे उस तरह कभी भी नही ले सका। यह सिर्फ एक नियम की तरह लेना चाहता था—सवेरे उठने के नियम की तरह, या कीकर की दातुन करने के नियम की तरह। पर मुझे इस नित्य-नियम मे डालना, लगता है उन्हें मजूर नही। या शायद उन्होने इसे इसके असली रूप मे देख लिया है—यानी 'सेवा' से बहुत छोटे रूप मे। और इस छोटे रूप में उन्हे यह मजूर नही हो सकता।

अब कोई तीन दिनो से साई भगतराम लपसी मे पोस्त के डोडे भी पीसकर डाल देता है, ताकि उन्हें जल्दी नीद आ जाए, और दाढो की पीड़ा से उन्हे कुछ देर के लिए चैन मिल जाए। इसलिए वे रात को जब बहुत जल्दी ऊघने लगते हैं, मैं साई भगतराम को उसकी 'सेवा' से उठाकर खुद उसकी जगह ले लेता हू। ऊघते हुए वे यह नही पहचान

सच । कि उनके पांव का दबाने हाथ मेरे हैं या साद भगतराम के।
पर हैरानी मुझे उनपर नहीं, अपने आपपर हो रही है—कि यह मेरा नियम सदा की हस्ती भी स्पन्न मे भी इतना दूर है कि उनके परों को दबाने म यात्र मैं जितनी देर अपने हाथो को अच्छी तरह मल मलकर न धा लू मो नहीं सकता।

समझ नही सकता पर नफरत जसी कोई चीज है जो मेरे मुह म एक दाढ़ की तरह उगी हुई है।

लगता है—जो कुछ खाता हू इसी दाढ से चबाता हू । चाहे कई बार यह भी लगता है—कि इस दा" म बडी पीडा हो रही है। यह मेरे मुह म हिल रही है पर निकलती नहीं।

और कभी यह सोचता हू कि कही किसी दिन कोई चिमटी सी मिल जाए तो उसके साथ खींचकर इस दाढ को हमेशा के लिए अपन मुह स निकाल दू।

पर फिर कुछ नही होता। पीडा भी नही होती। बल्कि फिर हर चीज को इस दाढ से चबान म स्वाद आता है।

हर एक चीज को हर एक ख्याल को जसे आज सुबह जब महन्त किरपासागर जी पूजा के श्लोक पढ़ रहे थे, और श्लोको के सारे शब्द उनके मुह मे दाढ़ों की तरह अटके हुए थे, तो अचानक मुझे जो ख्याल आया था वह यह था—कि जो ये मुह खोल दें, तो मैं हाथ मे एक चिमटा ले लू और श्लोका के सारे शब्द खाचकर उनके मुह से बाहर निकाल दू

यह किसी के लिए भी एक भयानक ख्याल है। पर एक पुजारी के लिए चाहे उसकी उम्र बीस बरस क्यो न हो—अति भयानक है

पर मैं सारा दिन इस ख्याल का स्वाद लेता रहा हू—जसे यह एक गिरी का टुकडा था जो अपनी दाढ स चबाता रहा हू

पा—>

गिरी में से एक सफेद दूध-सा घूंट रह-रहकर मेरे अन्दर उतरता रहा था…

आज मेरी दाढ़ मे बिल्कुल कोई पीड़ा नही हो रही।

आठ

हे ईश्वर !

ईश्वर पता नही क्या चीज़ है, यह शब्द एक आदत की तरह मुह से निकल गया है।

आदत की तरह नही, दुखी हुई सास की तरह।

शील वावा ने एक दिन मकरध्वज का नुस्खा लिखवाते हुए कहा था—"अनाड़ी हकीम की तरह कुछ अधकचरा करके किसी को न खिला देना। पारा कच्चा रह गया तो खाने वाले की हड्डिया गल जाएंगी…" और आज मैंने कच्चा पारा खा लिया है।

रोज नफरत की एक गिरी-सी खाता था। आज कच्चा पारा खा लिया है।

शायद हर जिन्दगी एक मकरध्वज होती है। ईश्वर जब भी किसी इन्सान को पैदा करता है, जिन्दगी नाम की चीज़ मकरध्वज की तरह उसे खिला देता है। और इन्सान हंसता है, खेलता है, जवान होता है, और उसकी जवानी धरती पर ठुमक-ठुमककर चलती है…धमकते चलती है…

और लगता है—ईश्वर ने जब मुझे जन्म दिया था और जब ज़िन्दगी नाम की चीज़ उसने मुझे मकरध्वज की तरह खिलाई थी, उस दिन एक अनाडी हकीम की तरह मकरध्वज बनाते हुए उससे पारा कच्चा र

गया था

यह कच्चा पारा शायद मैंने आज नही खाया, अपने जन्म के समय ही खा लिया था सिर्फ आज उसके असर को देख रहा हू—क्योकि आज लग रहा है कि मेरी हड्डिया गलनी शुरू हो गई है

आज प्रात काल—सुबह की पहली किरण के साथ—महत किरपा सागर जी को लगा कि उनकी उम्र के दिन पूरे हो गए है। उन्होने साइ मगतराम के कध का सहारा लिया, चारपाइ पर से उठे, और जैसे-तैसे मदिर मे पहुच गए।

मुझे बुलाया। एक नारियल मेरी झोली म डाला। और फिर जरी की एक पगडी शिव पार्वती के चरणो से छुआकर मेरे सिर पर बाध दी। अपनी सारी पदवी मुझे सौंप दी।

फिर मेरे आगे—अपनी पदवी के परो के आगे—खुद भी सिर झुकाया, साइ मगतराम और गोविन्द साधु का भी सिर झुकाने के लिए कहा और फिर उसके बाद जो कोई भी माथा टेकने के लिए आया उसे भी।

'सोचा था बहुत बडा समागम करूगा। पर अब वक्त नही उनकी सिर्फ एक छोटी सी यह हसरत आई थी, वैसे वे बडे सुर्खरू लग रहे थे।

योग्यता नाम की कोई चीज न कभी मुझे अपने में लगी थी न उस वक्त लग रही थी। बल्कि अपना आप उस वक्त

याद आ रहा था कि मगल नाम का एक साधु कुछ बरस हुए, इस डेरे म आकर रहा था। वह जहा भी बैठता था पास से गुजरते हर कीडे को हाथ से मारता रहता था। दिन मे न जाने कितने कीडे मारता था। उसका कहना था—मैं इस तरह कीडो को इनकी जून से छुडा रहा हू

उस वक्त जरी तिल्ले वाली पगडी सिर पर बाधकर—मुझे अपना

प बिल्कुल उस कीडे की तरह लग रहा था, जिसे उसकी जून से छुडाने
लिए किसी मगल साधु की ज़रूरत थी ।

पर कहा कुछ नही, कहने का कुछ हक भी नही था ।

शाम तक महत किरपासागर जी को और भी यकीन हो गया कि
नकी उम्र के दिन पूरे हो गए थे और वह शायद आखिरी दिन था।
बको अपनी कोठरी से बाहर भेज दिया गया। आज उनकी हालत को
ब़ते हुए मन्दिर मे आए कितने ही श्रद्धालु, मन्दिर मे वापस नहीं
ए थे, उन्होने सबको वापस जाने का हुक्म दिया।

और फिर मुझे अकेले कोठरी में बुलाया। पैरो के पास ही मैं बैठ
या। उन्होने पैरो के पास से उठाकर अपनी बाह के पास बिठाया।
पनी आखो के सामने।

पिछले कई दिनो से मुंह की सूजन की वजह से उन्हे बोलने मे
श्किल होती थी, पर उनके आधे-से उच्चारण को समझने की आदत
ड गई थी। इसलिए उन्होने जो कुछ कहा, समझने में कठिनाई नही
ई।

समझने के लिए तो शायद इतनी कठिनाई हुई है कि सारी उम्र
ी कुछ समझ मे नही आएगा, पर सुनने मे मुश्किल नही हुई।

"सिर की पदवी, सिर का भार, जिस तरह उतारकर तुझे दिया
, उसी तरह मन का एक भेद, मन का भार भी उतारकर तुझे
ेना है..."

सुबह जिस तरह तिल्ले की और जरी की पगड़ी सिर पर रख ली
ी मैंने, और मुह से कुछ नही कहा था, उसी तरह जो कुछ उन्होने
ताया, छाती पर रख लिया मैंने, और मुह से बिल्कुल कुछ नही कहा।

सिर्फ यह लगता है—सिर शायद साबुत रहेगा, पर छाती साबुत
नही रहेगी।

" आज जो भी पदवी तुझे मिली है, यह तेरा हक था, यह सिर्फ तुझे मिल सकती थी

" जिस तरह जो कुछ भी किसी बाप के पास होता है, बेटे को मिल जाता है। अमीर बाप से अमीरी, फकीर बाप से फकीरी

" मुझे सब कुछ मिला, जबान नहीं मिली। इस जबान से तुझे बेटा नहीं कह सका इस वक्त सिर्फ भगवान् हाजिर है, और कोई नहीं और भगवान् की हाजिरी म मैं तुझे एक बार बेटा कहकर मेरा अपना बेटा "

य सारे शब्द ज्यो-ज्यो उनके मुह से निकलते गए---मैं अपनी छाती पर रखता गया। देखने का जानने का, और सोचने का वक्त नहीं था, सिर्फ इन्हें पकड-पकडकर छाती पर रखता गया।

'तेरी मा एक पुण्यात्मा है उसे कभी दोष नहीं देना भगवान् ने खुद उसे सपने म दर्शन दिए इस सयोग का हुक्म दिया उसने सिर्फ हुक्म माना और मैंने सिर्फ एक बार उसे अगीकार किया फिर कभी नजर भरकर उसकी तरफ नहीं देखा उसकी साध पूरी हो गई उसके मन म सिर्फ एक बेटे की साध थी तेरी मेरा भी जन्म-जन्म की तृष्णा मिट गई तेरा जन्म एक पुण्यात्मा का जन्म "

कोठरी का दरवाजा खडका। दूर दूर के मन्दिरो के साधुओ तक महत जी की बीमारी की खबर कई दिनो से पहुची हुई थी, पर आज सुबह मन्दिर के वारिस की नियुक्ति की बात भी शायद पहुच गई थी, और उन्होंने अन्त नजदीक जानकर आज जल्दी से उनकी खबर लेनी चाही थी। उन आए हुओ को कोठरी मे बठाकर, मैं कोठरी से बाहर आ गया।

रात सोने से पहले कितनी देर तक मैं आसपास की पहाडी पग-

डडियो पर घूमता हू। आज भी वही पगडडियां है, पैरों की जानी-पहचानी हुई, पर पैरो को कई बार पत्थरो की ठोकर लगी है।

पैर कापते जा रहे हैं—टांगो के बीच की हड्डिया जैसे गलकर खोखली हुई जा रही है···कोई कच्चा पारा खा ले तो शायद ऐसे ही होता होगा···

नौ

अगर जन्म बदलना एक चोला बदलना है, तो मैं रोज़ दो चोले बदलता हू।

चार पहर एक चोला पहनता हूं—डेरे के स्वामी होने का। और चार पहर दूसरा चोला, एक बड़े बदशकल कीडे का।

'कीडा' शब्द जितना हीन है, 'स्वामी' शब्द उतना ही महान्। यह मेरे अस्तित्व के दो सिरे है।

हीनता और महानता।

जब सोता हू—देखता हू कि एक काले और बदशक्ल कीडे की तरह मै एक बिल मे से निकल रहा हू और मुझे जमीन पर रेगते हुए देखकर मगल साधु अपने उपले सरीखे हाथ को मेरे ऊपर फैलाकर हस रहा होता है, 'आ, मैं तुझे इस जून से छुडाऊ '

जागता हू—पैरो के पास कई माथे झुके हुए होते है, और मै एक पदवी के आसन पर बैठकर ज़मीन से ऊपर उठ रहा होता हू।

दोनो सिरो के बीच एक गुफा है, बड़ी सकरी और अधेरी। मन्दिर की एक दीवार मे से निकलती गुफा की तरह। और कई बार मैं उन दोनो सिरो से बचने के लिए उस गुफा में घुस जाता हूं।

यह मेरे काले और अन्धेरे ख्यालो की गुफा है। मसलन कभी यह कल्पना करके देखता हू कि मेरी मा ने महत किरपासागर जी स एक बेटे का दान कसे मागा होगा महत किरपासागर जी ने उसके सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखकर फिर वह हाथ धीरे धीरे उसके अगो पर किस तरह फेरा होगा शायद अपनी कोठरी मे जाकर, या शायद मन्दिर के पास लगे पेडो के घने झुण्ड मे फिर सफेद और गेरुए कपडे किस तरह कुछ देर के लिए एक दूसरे मे गुथ गए होगे

तेरी मा एक पुण्यात्मा महत जी के कहे हुए य शब्द गुफा के अधेरे म बडो जोर से हसत हैं और फिर यह हसी एक जीते-जागते बच्चे की शक्ल मे बिलखकर रो पडती है

मैं गुफा से बाहर भी आ जाऊ, तो यह बच्चा उसी गुफा मे पडा घिघियाकर रोता रहता है।

महत जी के स्वगवास की खबर सुनकर, गाव की कोई औरत या मद ही होगा जो उनके आखिरी दशन करने न आया हो। मा भी आई थी। गाव की सभी औरतो ने बारी-बारी महत जी के चरणो पर माथा टेका था और उनकी तरह मा ने भी टेका था पर वह जब महत जी की लाश के परो के पास झुकी थी—मुझे उसके मुह पर दिख रहा था कि उस एक क्षण म उसके मुह की हड्डिया निकल आई थी। मेरा ख्याल है उस वक्त वह जरूर सोच रही होगी कि महत जी के स्वगवास से अगर वह पूरी नही तो आधी विधवा हो गई थी

उसक 'आधी विधवा होने के ख्याल स एक हमदर्दी सी हो आई थी। असल म हुई नही थी, सिफ मैंने सोचा था कि होनी चाहिए थी। और फिर मैं यह सोचने लगा था—आज यह हमदर्दी मुझे अपने साथ भी होनी चाहिए, क्योंकि अपने बाप की मृत्यु से मैं सही अर्थों मे अनाथ

हुआ हू। पर यह हमदर्दी मुझे अपने से भी न आई।

चिता को आग दी थी—चेला होने के नाते भी देनी थी, बेटा होने के नाते भी।

एक बदन मे दो नाते शामिल है; सिर्फ मै शामिल नही। न उस वक्त, चिता को आग देते वक्त, शामिल था, न अब।

आज एक अजीब घटना घटी है, कि... शहर से कोई बड़ी अमीर-सी दीखती औरत आई थी। उसके साथ दो दासिया थी जिन्होने मन्दिर मे चढाने के लिए फल और मिठाई उठा रखी थी। वह मन्दिर की इस ख्याति को सुनकर आई थी कि इस मन्दिर मे मानता करने से सूखी हुई कोख भी हरी हो जाती है...

उसके हाथ प्रार्थना मे जुडे हुए थे, "कृष्ण खावे लड्डू-पेडा शिवजी पीवे भग, बैल की सवारी करे पार्वती जी के संग, मेरे भोला नाथ जी, मेरे काज सम्पूर्ण कर "

एक अजीब ख्याल आया था—कहते है, इतिहास अपने आप को दोहराता है। और आज शायद इतिहास ने अपने आप को दोहराना चाहा था

लगा—अभी उसकी प्रार्थना के जवाब मे उसको कह दूगा कि इस स्थान से हासिल किया हुआ बच्चा इसी स्थान पर चढाना होता है। और फिर जब वह 'हा' कर देगी, उसका हाथ पकड़कर उसको अपनी कोठरी मे ··

एक ग्लानि-सी हुई। लगा—इस औरत का हाथ पकडकर जब अपनी कोठरी मे ले जा रहा होऊगा, तब वह मैं नही होऊगा, वह मेरे रूप मे एक बार फिर महत किरपासागर जी मेरी मा का हाथ पकड़कर

उसे अपनी कोठरी मे

इसलिए उस औरत को कुछ नहीं कहा बल्कि घबराकर आखें बद कर ली। उसने शायद यह समझा था कि मैं उसके लिए प्रार्थना कर रहा था, क्योकि फिर जब आखें खोलीं, वह बडी सन्तुष्ट होकर और प्रणाम करके चली गई थी

मन की अजीब दशा है—मा के साथ हमदर्दी करना चाहता हू—होती नही। फिर यह सोचकर कि इन्सान की मौत के बाद तो उसके साथ कुछ हमदर्दी हो जाना चाहिए महत किरपासागर जी के साथ हमदर्दी करना चाहता हू पर कुछ नही होता आखिर म एक अपना आप रह जाता है। सोचता हू, तीन पात्रो म एक ही सही पर वह पात्र भी मेरी हमदर्दी का पात्र नही बनता

और जसे महत जी के आखिरी दिनो म उनके मुह की सूजन भी उतर गई थी, पर उनकी हालत बिगडती गई थी हकीम ने बताया था कि मसूढा म पडा हुआ मवाद उतरकर अन्दर मेदे मे पड गया है—लगता है, मेरी नफरत भी माथे से उतरकर मरे अन्दर मरे मन म पड गई है—किसीको कुछ कहना नही चाहता, पर मेरे अन्दर से रत की तरह कुछ गिरता बिखरता जा रहा है

दस

आइ मा क पडा पर जब मा फूल लगते हैं, मेरी आखें अजाब तरह बेचैन हो जाती हैं। लगता है, यह सिफ मुझपर हसने क लिए खिलते हैं। यह सिफ अब ही नहीं लगता, जब बहुत छोटा था तब भी लगता था कि मैं किसी चलते हुए पत्थर में से उग आई घास की तरह हू और

शायद किसी को पता नही, पर आड ुओ के पेड़ को यह भेद पता लग गया है—और वह ज़ोर-ज़ोर से खिलखिलाकर हस रहा है···

'मेरी जड़ धरती की छाती के भीतर है, तेरी कहा है ?' वह कई वार कहता था, और वडी ज़ोर से हसता था—इतने ज़ोर से, कि उसके कई फूल झडकर मेरे जिस्म पर गिर पडते थे—जैसे हसते-हसते किसी के मुह से थूक गिर पड़े।

मैंने उसके नीचे खडा होना छोड दिया, पास खड़े होना भी छोड दिया। पर वह दूर खडा हुआ भी हस सकता है, इसलिए जब उसकी हसी की आवाज कान मे पड़ती है, मेरी आखे अजीव तरह वेचैन होकर उधर देखने लगती है।

पीपल की जड़ भी धरती मे होती है, और पेडो की भी, पर ये अपने मे मस्त रहते है—अपने हरे-पीले वदन मे लिपटे हुए। आड ुओ के पेड की तरह कोई भी खिलखिलाकर नही हसता।

पता नही, उसे इतनी वार हसने की क्यो जरूरत पडती है—जब कि मुझे पता है कि मैं किसी पत्थर की दरार मे से अपने आप उग आई घास का एक तिनका हू, मेरी कोई शाखाए कभी नही निकलेगी, कभी कोई फूल नही लगेंगे, फूलो से कोई फल कभी नही वनेगे ···

अगर वन सकते होते · महत किरपासागर जी ने जव अपनी आखिरी सासे लेते हुए इशारे से अपने पास वुलाया था, उस शाम जो भेद उन्होने मेरे सामने खोला था, उनकी आखो मे एक भेद की लौ थी, इस लौ को शायद वात्सल्य कहते हैं, पर मेरे वदन की नाडियो मे कोई खून नही पिघला था। एक हुक्म मे वधा मैं उनके पास हो गया था, पर उनके वोलते खून के जवाव में, मेरा खून कुछ नही वोला था। उनकी आंखो मे एक धुध-सी आ गई थी, शायद कोई हसरत-सी थी और फिर उन्होने आखे वन्द कर ली थी···मैं पत्थर की दरार में से उग

उसे अपनी कोठरी म

इसलिए उस औरत को कुछ नहीं कहा बल्कि घबराकर आखें बद कर लीं। उसने शायद यह समझा था कि मैं उसके लिए प्रार्थना कर रहा था क्योंकि फिर जब आखें खोलीं वह बड़ी सन्तुष्ट होकर और प्रणाम करके चली गई थी

मन की अजीब दशा है—मां के साथ हमदर्दी करना चाहता हू—होती नही। फिर यह सोचकर कि इसान की मौत के बाद तो उसके साथ कुछ हमदर्दी हो जानी चाहिए महत किरपासागर जी के साथ हमदर्दी करना चाहता हू पर कुछ नही होता, आखिर मे एक अपना आप रह जाता है। सोचता हू, तीन पात्रो म एक ही सही पर वह पात्र भी मेरी हमदर्दी का पात्र नही बनता

और जसे महत जी के आखिरी दिनो म उनके मुह की सूजन भी उतर गई थी, पर उनकी हालत बिगड़ती गई थी हकीम ने बताया था कि मसूड़ो मे पड़ा हुआ मवाद उतरकर अन्दर मेदे मे पड़ गया है—लगता है, मेरी नफरत भी माथे से उतरकर मेरे अन्दर मेरे मन मे पड़ गई है—किसीको कुछ कहना नहा चाहता पर मेरे अन्दर से रेत की तरह कुछ *गिरता बिखरता जा रहा है*

दस

आड़ूओ के पेड़ो पर जब भी फूल लगते हैं, मेरी आखें अजीब तरह बेचन हो जाती है। लगता है यह सिफ मुझपर हसने के लिए खिलते हैं। यह सिफ अब ही नही लगता, जब बहुत छोटा था तब भी लगता था कि मैं किसी चटखे हुए पत्थर म से उग आई घास की तरह हू, और

शायद किसी को पता नही, पर आड ुओ के पेड को यह भेद पता लग गया है—और वह ज़ोर-ज़ोर से खिलखिलाकर हस रहा है···

'मेरी जड़ धरती की छाती के भीतर है, तेरी कहां है ?' वह कई वार कहता था, और वडी ज़ोर से हसता था—इतने ज़ोर से, कि उसके कई फूल झडकर मेरे जिस्म पर गिर पडते थे—जैसे हसते-हसते किसी के मुह से थूक गिर पड़े।

मैंने उसके नीचे खडा होना छोड दिया, पास खड़े होना भी छोड दिया। पर वह दूर खडा हुआ भी हस सकता है, इसलिए जव उसकी हसी की आवाज कान मे पडती है, मेरी आखें अजीव तरह वेचैन होकर उधर देखने लगती है।

पीपल की जड़ भी धरती मे होती है, और पेडो की भी, पर ये अपने मे मस्त रहते हैं—अपने हरे-पीले वदन मे लिपटे हुए। आड ुओ के पेड की तरह कोई भी खिलखिलाकर नही हसता।

पता नही, उसे इतनी वार हसने की क्यो जरूरत पडती है—जव कि मुझे पता है कि मैं किसी पत्थर की दरार मे से अपने आप उग आई घास का एक तिनका हू, मेरी कोई शाखाए कभी नही निकलेगी, कभी कोई फूल नही लगेगे, फूलो से कोई फल कभी नही वनेगे·· ···

अगर वन सकते होते·· महत किरपासागर जी ने जव अपनी आखिरी सासे लेते हुए इशारे से अपने पास वुलाया था, उस शाम जो भेद उन्होने मेरे सामने खोला था, उनकी आखो मे एक भेद की लौ थी, इस लौ को शायद वात्सल्य कहते हैं, पर मेरे वदन की नाडियो में कोई खून नही पिघला था। एक हुक्म मे वधा मैं उनके पास हो गया था, पर उनके वोलते खून के जवाव में, मेरा खून कुछ नही वोला था। उनकी आंखो मे एक धुध-सी आ गई थी, शायद कोई हसरत-सी थी और फिर उन्होने आखे वन्द कर ली थी···मैं पत्थर की दरार में से उग

झाई घास का एक तिनका-सा हू मगर एक बीज की तरह धरती को छाती चीरकर उगा होता, जरूर मेरी किसी टहनी पर खून का फूल खिल पडता

सुदरा ने मा यह आजमाकर देख लिया है। आजमाइश का दिन था—उसकी नहा, मरी आजमाइश का।

मेरे लिए क्या हुक्म है ? मदिर के साथ के सुनसान जगल म उसने मुझे पता नहा किस तरह ढूढ लिया था और मरे पास आकर, यह कहते हुए एक अनुनय से मेरी तरफ देखा था।

मरा हुक्म ? किसलिए ?' कुछ समझ नही पाया था। सिफ यह समझ सका था कि मन्दिर म फूलो की झोली को पलटती हुई वह जब जमीन का हाथ स छूती थी, तो उसकी हथेली मरे परो का छू रही सी लगती थी। यह भुलावा नहा था।

क्या पूरन इस जन्म मे भी सुदरा को स्वीकार नही करेगा ? उसकी आखों म पानी भरा हुआ था, आखो मे भी और आवाज म भी, क्याकि उसके शब्द भी गीले से लग रहे थे।

'मैं पूरन भी नही हू और राजा का बेटा भी नहीं,' सिफ इतना ही कहा था। हैरान था—पत्थर की दरार मे से निकले घास क तिनके वाली बात झाड़ियो के पेड का पता लग गई थी पर सुदरा का क्या पता नहा लगा था ?

मदिर म पूजा के समय जब वह फूलो की झोली का पलटता था उसकी बाह फूलो के ढेर म एक सापिन की तरह पडी हुई लगती था, और वह मरे पर का जब उगलिया या हथेली छुआती थी, पर मूर्च्छित सा हुआ लगता था—पर आज ने उसके डक को अकारथ कर दिया है। भला घास के तृण का भी कभी किसी साप का जहर चढता है ? मुझे उसका बात का जहर नहीं चढ सकता

"मेरी आत्मा ··"वह कुछ ऐसी बात कहने लगी थी, मैं परे उससे दूर-सा होकर खड़ा हो गया। आत्मा और पुण्यात्मा वाली कहानी जो महत किरपासागर जी ने सुनाई थी, वही बहुत थी, इस कहानी को फिर आज सुन्दरा से सुनना नही चाहता था।

"मेरे पत्थर के देवता···"उसने वही दूर से कहा, और फिर जल्दी से चली गई।

सुन्दरा बावली है, रो पड़ी थी, पता नही उसने आडुओ के पेड़ो की तरफ क्यो नही देखा—वह अगर देखती, तो उसे वह भेद मालूम हो जाता कि उस पेड के सारे फूल सिर्फ मुझपर हसने के लिए खिलते थे···

पिछले कई सालो मे मै कभी आडुओ के पेड के नीचे नही खड़ा हुआ था, आज बडी देर तक खडा रहा, लगा आज जरूर खड़ा होना था, और देखना था कि आखिर उसके फूल मुझपर कितना हस सकते हैं···

ग्यारह

आडुओ के गुलाबी फूलो की हसी, और सुन्दरा की काली स्याह आंखो के आमू अजीब तरह एक-दूसरे में मिल-जुल गए है। शायद यह हसी बीज की तरह है, जिसे धरती मे बोकर यह आसू पानी दे रहे है ···· या आंसू गोल बीज की तरह है जिसे धरती मे बीज कर यह हसी पानी दे रही है ··

एक अजीब-सी हमदर्दी मेरे मन में उग आई है—मा को तो भगवान् ने सपने मे दर्शन दिए, भगवान् की तरफ से उसे एक सयोग का हुक्म मिला, महत किरपासागर जी ने भगवान् का हुक्म मान लिया, और दोनो ने मिलकर कुछ प्राप्त कर लिया। पर वह तीसरा आदमी ·

जो मेरी मा का पति है पर मेरा बाप नही उस बेचारे ने क्या प्राप्त किया सिर्फ एक भुलावा कि मैं उसका बेटा हू चाहे उसके ग्रागन म नही खेला चाहे उसके खेतो मे उसका हल नही चलाया, पर उसके वश का चिराग हू

क्या चिराग जसा श द भी इतना काला और अधियारा हो सकता है

लगता है—मा ने एक अधेरा चुराया, जब तक अधेरे का अपनी कोख म छुपा सकती थी छुपाये रखा। फिर जब छुपाया न गया, उसकी एक पोटली बाधकर उस गरीब आदमी के सामने जा रखी—देख ! मैं तेरे घर का चिराग ढूढकर लाई हू ।

चिराग क्या होता है—मिट्टी की एक कटोरी सी थोडा सा तेल थोडी सी रुई। वह तो था ही । सिर्फ आग नहा थी । आग एक सच्चाई होती है पर झूठ भी शायद सच्चाई की तरह बलवान् होता है और वह भी अपने हाथो की रगड म से आग की चिंगारी पदा कर सकता है

चिराग जल गया । पर एक फर्क मैं देख सकता हू—इस चिराग की रोशनी म जो राह नजर आती है उस राह पर एक भयानक खामोशी है और एक भयानक एकाकीपन ।

इस चिराग से जिसका भी सम्बध है सब उस राह पर चल रहे है पर सब एक दूसरे से अपनी आखो को चुराते हुए और अपने अस्तित्व को भी चुराते हुए सब एक दूसरे से टूटे हुए और अपने अपने एकाकीपन का भोगते हुए

हमदर्दी जसे श द को मा के साथ जोडना भी चाहू ता भा नही जुडना। महत किरपासागर जी के साथ भी नही जुडता। सिर्फ कुछ जुडता है—तो उस बेचारे आदमी के साथ जो दुनिया की नजर म मरा बाप है।

वाप शब्द से ख्याल आया है कि अगर मैं इस शब्द को उस वेचारे आदमी पर से उतार दू—(मुझे लगता है इस शब्द को उसने एक गठरी की तरह उठाया हुआ है)—और इस शब्द का भार मैं महत किरपा-सागर जी के सिर पर रख दू, फिर ?

पर अब वह भी नही हो सकता। अगर महत किरपासागर जी जीवित होते, तो मैं शायद किसी दिन यह कर देता। पर अब यह भार मैं उनकी लाश के सिर पर कैसे रख दू ?

आज सुबह मन्दिर के कार्यो से निवटकर, मेरे पैर जवरदस्ती उस खेत की तरफ चल पडे थे, जहां वह 'वेचारा' आदमी हल चला रहा था। पता नही, उसने क्या समझा होगा, पर मैंने उसके हाथ से उसका काम पकड़ लिया था। सूरज जब तक शिखर पर नही आया था, मै उसके खेतो में उसके एक मजदूर की तरह लग रहा था…उसके काम का वोझ हलका नही कर रहा था, सोच रहा था, शायद ऐसे ही उसके सिर पर उठाये हुए शब्द का भार कुछ हल्का हो जाए…

उसका मुझे पता नही, पर मेरा अपना आप कुछ हल्का-सा हो गया है—खेत के पास बहते पानी मे जब मैंने अपने हाथ धोए थे, लग रहा था—वदन से कुछ घोया जा रहा था। कन्धे की चादर से जब माथे का पसीना पोछा था, लग रहा था—लेस की तरह लगे हुए एक रिश्ते का कुछ हिस्सा मैंने आज पोछ दिया था…

अगर मैं रोज़ इसी तरह कुछ पोछता रहू, तो शायद किसी दिन सब कुछ पोछ दिया जाएगा ··

हे भगवान् ··

मैंने यह सोचा ही नही कि अगर मैं रोज उसके खेत मे जाकर उसकी गोड़ाई या जुताई करूगा, तो गाव वाले रोज देखेगे, और तव लेस की तरह लगा हुआ यह रिश्ता दिनो-दिन छूटेगा या और पक्का

सुन्दरा नही जानती, पर यह भी एक रिश्ता है

यही रिश्ता जो हवन कुण्ड के साथ होता है

मैं कुण्ड हू, पाराशर स्मृति के अनुसार पति के जीते जी जो स्त्री किसी और से सन्तान लेती है उस सन्तान का नाम कुड होता है

किसी कुण्ड म जो कुछ पडे वह दग्ध हो जाता है

मुझे प्यार करके सुन्दरा अपना हवन करना चाहती थी। वह नही जानती पर मैंने उसे हवन की सामग्री होने से बचाया है

तेरह

मा औरत के रूप मे होती है पृथ्वी के रूप म भी। विष्णुपुराण मे कथा आती है कि विष्णु ने जब वराह का रूप धारण किया तो पृथ्वी ने उसके साथ भोग करके नरक नामक पुत्र पदा किया।

सो यह कहानी सिफ मेरी नही, आदि युगादि की है।

और आदि युगादि से यह नरक पदा होते रहे हैं।

भोग करन वाला का क्या है उनका खेल उनको नही भुगतना पडता यह सिफ नरको का भुगतना पडता है। यह सिफ मुझे भुगतना है

आज सुबह मा जब मन्दिर में आई थी सोच रहा था, उसको प्रणाम करू। बिल्कुल इस तरह जिस तरह कोई पृथ्वी को प्रणाम करता है।

पृथ्वी ने जब नरक पदा किया था, तो किसी ने भी पृथ्वी का निरादर नही किया था, सो मुझे भी उसका निरादर करने का क्या हक है ?

मेरी मां साक्षात् पृथ्वी है।

मुलफा बहुत अच्छी चीज़ है। मैंने आज तक नही पिया था। गोविन्द साधु के हाथो से चिलम पकड़कर आज मैंने थोड़ा-सा ही पिया कि आनन्द आ गया। अजीब-अजीब बाते भी सूझ रही हैं···

अभी चरपट योगी की कथा याद आई है कि चरपट योगी का जन्म योगी मछेन्द्रनाथ की दृष्टि से हुआ था—भोग से नही, सिर्फ दृष्टि से।

और क्या पता मेरा जन्म भी महन्त किरपासागर जी की सिर्फ दृष्टि से हुआ हो···

लगता है, महत किरपासागर जी भी योगी मछेन्द्रनाथ की तरह सिद्ध पुरुष थे। सो सिद्ध पुरुषो को प्रणाम करना चाहिए···

मुझे अफसोस है कि मैंने महत किरपासागर जी को कभी जीते जी ऐसे प्रणाम नही किया था। चरपट योगी ने मछेन्द्रनाथ को ज़रूर प्रणाम किया होगा। मुझे चरपट योगी से यह शिक्षा लेनी चाहिए थी···

चरपट योगी मेरे बड़े भाई की जगह है···पता नही यह ख्याल पहले क्यो नही आया ··उसका जन्म भी ऐसे हुआ था, जैसे मेरा···सो हम भाई-भाई है ··आज मैं बहुत खुश हूं···आज इतिहास के पन्नो मे से मुझे मेरा भाई मिल गया है ·

गोविन्द साधु पता नही कहां अलोप हो गया है। अभी नागफनी की झाड़ी के पास बैठा चिलम पी रहा था। कही साईं भगतराम ही दिख पड़े तो कहूं कि चिलम मेरे लिए भी भर ला। चिलम के दो घूंट से ही आनन्द आ गया···

आनन्द की तृष्णा भी अजीब चीज़ है···यह मैं किस तरह बैठा हुआ हूं, किस मुद्रा मे ? ओह, याद आया—यह भद्रा मुद्रा है। टखनो को मोड़-

कर अपने नीचे रखकर बठने की मुद्रा। योगियो का आसन

पता नही मेरे नीचे क्या बिछा हुआ है मेरा ख्याल है मद्रासन होगा बहुत सख्त है मद्रासन होता ही सख्त है बल का चमडा इस आसन पर बठने वाले लोगो की भलाई के लिए बठते है लोगो के कल्याण के लिए मैं किसका कल्याण करूगा ? क्या आसन पर बठने वाले अपना कल्याण नही कर सकते ?

एक अजीब बू आ रही है शायद बल के चमडे की है नही यह मेरे जिस्म म से आ रही है हाथो म स बाहा म से छाती म से मछली की बू की तरह मत्स्यगन्धा वह कौन थी मत्स्योदरा ? वह जो वसु राजा के वीय मे मछली के पेट म से जन्मी थी ? उसे भी जरूर अपने जिस्म मे से मछली की बू आती होगी मेरी मा भी शायद मछली है मैं मछली के उदर से पदा हुआ हू एक दिन महत किरपा सागर जी समाधि म लीन थ पता नहा महाभारत म किसी ने यह कथा क्यो नही लिखा

व्यास ने महाभारत लिखते समय जरूर भाग पी रखी होगी नहीं सुलफा पी रखा होगा कोई साइ भगतराम उसकी चिलम भर रहा होगा और वह लिखता गया होगा आज साइ भगतराम ने कमाल की चिलम भरी है मैं भी महाभारत लिख सकता हू

महाभारत का क्या है जो मरजी आए लिखते जाओ जहा कुछ समझ न आए वहा जो जो चाहे लिख दो शुक्र ब्रह्मा का बेटा था पर शुक्र की मा नही थी वह एस ही पदा हो गया था। ब्रह्मा एक यन करवा रहा था वहा देवताओ की बहुत सुन्दर पत्निया आई हुई थी तो उनको देखकर ब्रह्मा का वीय गिर गया। सूरज ने उस वीय को इकट्ठा कर लिया और अग्नि म उसका हवन किया। तो उसी वक्त अग्नि मे स तीन सुन्दर बालक निकल आए देवताओ ने एक बालक शिव को दे दिया

खामखाह···एक अग्नि को दे दिया···वह भी खामखाह ··और एक उसके असली बाप को दे दिया, ब्रह्मा को, यही बालक शुक्र था···

तो बाप का क्या है, बाप पर कोई दोष नही लगता·· इसलिए बाप का नाम याद रख लेना चाहिए···दोष सिर्फ मा पर लगता है, सो मा का नाम भूल जाना चाहिए···बच्चे का क्या है, वह कही भी पैदा हो सकता है—मछली से भी, पृथ्वी से भी, अग्नि से भी· मैं जब महाभारत लिखूगा, तो लिखूगा कि मैं सुलफे की चिलम मे से जन्मा था···

खूब वक्त पर ख्याल आया है कि बच्चे की पैदाइश के लिए इन्सान का वीर्य भी ज़रूरी नही· पद्मपुराण मे लिखा है कि मगल विष्णु के पसीने से पैदा हुआ था···वामनपुराण मे लिखा है कि शिव जी के मुह में से एक थूक गिरा और उस थूक में से एक बालक जन्मा था···

सो मैं अपने जन्म की कथा लिखूगा कि एक दिन महत किरपासागर जी सुलफे की चिलम पी रहे थे · मुह से एक थूक गिरकर चिलम मे पड़ गया · और मैं सुलफे के धुए की तरह चिलम मे से निकल पडा

यह सब सम्भव है·· अयोध्या के सूर्यवंशी राजा सगर की रानी सुमति को और्व ऋषि के वर के अनुसार साठ हज़ार पुत्र पैदा होने थे, ऋषि की वाणी थी, इसलिए सुमति के गर्भ से एक तुम्बा जन्मा, जिसमे साठ हजार बीज थे। राजा ने साठ हज़ार घी के घडे भरकर, उनमे एक-एक बीज रख दिया—दस महीने बाद हर घडे मे से एक-एक बालक निकल आया

यह हरिवशपुराण की कथा है, इसलिए सच है। सच किसी काल मे भी हो सकता है। इस काल में यह भी सच है कि एक दिन महत किरपासागर जी सुलफे की चिलम पी रहे थे, मुह मे से एक थूक गिरकर चिलम मे पड गया, और एक बालक, सुलफे के धुएं की तरह चिलम मे से निकल पडा ·

यह कैसा ज्ञान है जो मुझे प्राप्त हो रहा है···

भुशुडि नाम के एक ब्राह्मण को जब लोमश ऋषि ने श्राप दिया था तो उसके श्राप से वह एक कौम्रा बन गया था, पर कौम्रा बनते ही उसको एक ज्ञान प्राप्त हो गया था और फिर वह चिरजीवी होकर सब ऋषियो को कथा सुनाता रहा

मैं भी शायद उसकी तरह कागभुशुडि हू मुझे भी एक ज्ञान प्राप्त हुम्रा है मैं भी समय का एक कथा सुना रहा हू

चौदह

सुना—मा बहुत बीमार है। कुछ दिनो से मन्दिर मे देखी नही थी। कुछ ऐसा ही ख्याल आया था पर जिस बात को खबर लेना कहते हैं, उस बात का ख्याल नही आया।

आज उसने अपनी किसी पडोसिन को भेजा था— एक बार मुह दिखा जा। यह मर बत्तीस दातो म स निकली मिन्नत है।"

उस वक्त मैं मन्दिर मे खडा था शिव और पार्वती की मूर्ति क पास और लगा यह न द सुनकर मैं भी पत्थर की तरह हो गया था—परो को उठाकर चलन की जगह वहा पत्थर की तरह हो जाना आसान लगा था।

यह सुबह की बात है। दोपहर के समय वह पडासिन फिर आई थी, 'मरने को पडी है, कहती है—एक बार मुह दिखा जा। तुझे मेरे दूध की बत्तीस धारो की सौगन्ध '

बत्तीस दात बत्तीस धारें लगा, उसके पास बत्तीस की गिनती बहुत भारी थी और अचानक ख्याल आया कि स्कन्दपुराण के काशीखण्ड म औरत क बत्तीस शुभ लक्षण मान गए हैं

इकतीस के बारे मे कुछ नही कह सकता पर एक के बारे म जरूर

कह सकता हू। वत्तीस मे से एक लक्षण निष्कपटता भी है।

सोचा, जाना है, इसलिए जाऊगा। दूव की वत्तीस धारो का कर्जा लौटाने नही, और न ही वत्तीस दातो में से निकली मिन्नत को सुनकर, सिर्फ एक मन्दिर का साधु होने के नाते, जिसे गाव मे से आए किसी मर्द या औरत के वुलावे पर जरूर जाना होता है।

सिर्फ यह ख्याल ज़रूर आया कि उसने अपने आखिरी वक्त या मुश्किल की घडी मे, जो मेरे मुह से कोई साधु-वचन सुनना चाहा, तो मैं यह कह सकूगा, 'भली औरत ! तुझमें औरत के वत्तीस शुभलक्षणो मे से शायद इकत्तीस ही होगे, पर मैं वत्तीसवे की वात करता हू—निष्कपटता की। जिस मर्द के नाम के नीचे तूने सारी जिन्दगी गुजारी है, अगर आखिरी वक्त तू उसके साथ निष्कपटता वरत ले…'

जाते वक्त कोई और ख्याल नही आया था। सिर्फ एक ख्याल था, यही ख्याल जो मैं सुलफे की तरह पीता गया था। और एक क्रोध-सा था जो सुलफे के धुएं की तरह निकल रहा था ·

अव आती वार ख्याल आ रहे है, यह भी कि सुलफे का जो नशा मेरे सिर को चढा हुआ था—एक दम का नशा था। शायद दम को भी सुलफे की तरह पिया जा सकता है…

और यह ख्याल भी आ रहा है—वत्तीस शुभ लक्षण सिर्फ औरत के ही नही होते, मर्द के भी होते हैं। और उन वत्तीस मे से एक लक्षण उदारता भी होता है, क्षमा भी। मैंने उसके शुभ लक्षणो की गिनती करके उसको सुना दी, पर यह गिनती मैं अपने लिए भी तो कर सकता था…

क्या उदारता और क्षमा वाला लक्षण मुझमे नही होना चाहिए ?

उम्र के वरसो की तोडी हुई एक औरत, वडी दीन-सी होकर, और हारकर, चारपाई के वान से लगी हुई थी, और मैं परे एक आसन पर चावल के माड की तरह अकड़कर वैठ गया था।

चलो, बठ भी गया था, तो चुप ही रहता

उसने मुझे हाथ से छूना चाहा था—बढ़कर, पता नही पैरो का कि सिर को, पर उसका हाथ बीच म ही लटका रह गया था

कुछ झुरियां थीं जो हवा म लटक रही थी

मास के बलो मे पता नहीं जिन्दगी का क्या कुछ लिपटा होता है

परे भ्रासन पर बठे हुए मुह पर शायद निदयता जसी कोई चीज थी लगा—उसने देख ली थी और उसकी भ्राखो म पानी भर भ्राया था।

शायद वह सोचती थी कि भ्राखो के पानी स वह मरे मुह पर से इस निदयता को धो सकती थी

पर यह मेरे मुह पर जो कुछ भी उसे दिखा था धूल की तरह उड़कर पडा हुआ नही मास क रोम की तरह उगा हुआ है।

वही बात हुई जो मैंने सोची थी। मरी खामोशी तोडने के लिए उसने कहा—मरे लिए कोई वचन।

वचन मैं सोचकर गया था। इसलिए कह दिया—निष्कपटता।

लगा उसके मुह की सब भुरियां मेरी भ्रोर देखने लगी थीं।

उस वक्त कोठरी मे वह अकेली थी। मैं था पर मरा मतलब है उसका पति उसका दीनानाथ—उस वक्त बाहर भ्रोसारे मे था अन्दर उसक पास कोठरी म नही था।

मैं जानू या मरा परमात्मा। मैं निष्कपट हू' उसकी बहुत धीमी सी भ्रावाज भ्राई थी।

सुनकर हसी सी भ्रा गई थी।

उसकी भ्राखों म कुछ फर गया था। शायद खौफ जसी कोई चीज थी। वह एकटक मरी तरफ देख रही थी भ्रौर उसकी भ्राखों म वह खौफ दीपक की तरह चमक पडा था। भ्रौर फिर लगा था—वह दीप की तरह चटख गया था शायद पिघल गया था

उसकी आखो से कुछ पानी पिघले हुए शीशे की तरह वह रहा था।

उसने खाट की वाही पर छाती का भार डालकर अपनी वाह को लटकाया—मेरे आसन का एक कोना हथेली से छू लिया। आसन का कोना भी, उसके साथ लगा मेरा घुटना भी।

घुटना जल-सा उठा, एक क्रोध से। हथेली को घुटने से झटक सकता था, पर गुस्से की बडी गरम लकीर, घुटने से लेकर जवान तक फैल गई थी, इसलिए जवान तिलमिला गई। कह दिया—"महत किरपासागर जी ने आखिरी वक्त यह 'निष्कपटता' मुझे वता दी थी।"

वहुत साल हुए, एक वार गोविन्द साधु ने एक साप मारा था। उसका डडा जव साप की कमर मे धसा हुआ था, और साप के सिर वाला हिस्सा, और नीचे धड वाला हिस्सा दो अलग-अलग हिस्सो मे तड़प रहे थे—मैं उसके पास खड़ा, उसको देखता, एक ग्लानि से भर गया था। उस दिन मुझे साप पर नही, गोविन्द साधु पर वडा गुस्सा आया था। साप तडप रहा था, गोविन्द साधु तमाशा देख रहा था।

लगा, मेरी वात सुनकर, वह भी साप की तरह तडप उठी थी, मेरी वात लकडी के एक डडे की तरह उसकी पीठ में धस गई थी, और जिसके वोझ के नीचे वह गुच्छा हुई अजीव तरह टूट रही थी। अपने आपसे भी एक नफरत हुई। अपने आपसे भी, उस वात से भी, और उस वात की चोट से तडपती उसकी जान से भी।

एक मरते हुए इन्सान को मैं कैसी शान्ति दे रहा था? मुझे पता था, मैं एक वदला ले रहा था, पर यह कैसी घडी थी वदला लेने की?

और सवसे अधिक नफरत अपने आपसे हुई। अपने अस्तित्व से। जैसे मेरा अस्तित्व नफरत का एक टुकडा हो…

हिल-सा गया था।

फिर यह ख्याल भी आया—जो मैं नफरत का एक टुकडा था तो मास के इस टुकडे को जन्म देने वाली मां ? यह एक बच्चे की मा नहीं एक नफरत की मा थी।

और मैं फिर अडोल-सा हो गया।

कोठरी म एक खामोशी छा गई थी।

यह खामोशी शायद बहुत भारी थी पत्थर की शिला का तरह। इसको न मैं हटा सकता था, न वह।

पर मेरा ख्याल गलत निकला, उसने खामोशी की शिला ताडी और कहा— मुझे पता था एक दिन मुझ अग्निकुण्ड म नहाना होगा

मैंने कुछ हैरान होकर उसके मुह की तरफ देखा।

अचानक उसने अपनी मि नत-सी करती हथेली मेरे घुटने पर स हटा ली। और बडी शान्त होकर अपनी खटिया पर आराम से लेट गई।

अब उसकी आवाज भी बडी शान्त और अडोल थी। उसने सहज भाव स कहा— कई बार लगता था कि सीता की तरह मुझे भी अग्नि परीक्षा देनी पडेगी

लगा—यह बोल महत किरपासागर जी के उन बोला क साथ मिलते थे—तेरी मा एक पुण्यात्मा है उसे कभी दोष न देना स्वय भगवान् ने सपने मे उसे दशन दिए '

पर यह बात शायद जान-बूझकर मिलाए गए थे। मुझे कभी भी भगवान् के इन दशनो वाली बात पर विश्वास नहीं हुआ था। और लगा अब मा भी अगले वाक्य म इन दशनो वाली बात का दुहरा देगा

इन्सान अपने किए को अपने हाथ मे न पकड सके, तो बडी सीधी-सी बात है कि वह भगवान् के हाथ मे पकडा दे

पर उसने कुछ नहीं कहा।

इसलिए मुझे, खुद, कहना पडा—"भगवान् ने सपने मे दर्शन दिए, सिर्फ यही कहने के लिए ?"

वह सचमुच हस दी, "नही, मेरे लाल ! मेरे ऐसे करम कहा थे कि भगवान् मुझे सपने मे दर्शन देते, और कुछ कहते ।"

लगा—दर्शन वाली वात महत किरपासागर जी ने मेरे मन को वहकाने के लिए वनाई थी ।

और लगा—एक झूठ था, जो इस कोठरी मे पडी हुई खटिया पर से रेगता-रेगता, एक मरे हुए इन्सान की समाधि तक पहुंच गया था।

पर मैं झूठ और सच को नितारना क्यो चाहता था ? अपने पर एक खीझ-सी आई। और लगा अगर यह लोग किसी झूठ पर कुछ खाड-सी लपेटकर मुझे खिलाना चाहते है, तो मैं इसे खा क्यो नही लेता ? आखिर भगवान् के नाम को खाड की तरह पीसने के लिए, इन वेचारों ने कितना कुछ किया है···

"अग्नि-परीक्षा, कभी किसी पति की आज्ञा थी, आज पुत्र की आज्ञा है· "

लगा—वह अपने आपसे वाते कर रही थी।

फिर एक गुस्सा-सा आ गया—झूठ को खिलाना भी जरूर है, पर दूसरे से यह भी कहलवाना है कि यह वहुत मीठा हे !

उसने मेरे गुस्से को नही जाना, कहती गई—"मेरे ऐसे करम नही थे जो भगवान् मुझे दर्शन देते। मैंने सिर्फ उसकी आज्ञा मानी थी, जिसको मैंने सारी उम्र भगवान् समझा। दर्शन उसे हुए थे, मैंने सिर्फ उसकी आज्ञा मानी।"

दरवाजे के पास खटका-सा हुआ। लगा अव वह विल्कुल चुप हो जाएगी, क्योकि अव उसका पति अन्दर कोठरी मे आ गया था।

"हकीम से तेरे लिए एक और पुड़िया लाया हू···" उसने कोठरी

दे आते हुए कहा । और कहा, 'हकीम ने कहा है कि आज का दिन कष्ट का है अगर आज का दिन कुशलता से गुजर गया तो "

'हां आज का दिन ही कष्ट का था ' लगा वह हंस रही थी और फिर उसने अपनी चारपाई पर से हाथ में दवा की पुड़िया लेकर, खड़े हुए अपने पति के परों की तरफ अपना हाथ बढ़ाकर कहा— मैं तेरे, अपने भगवान के हाथों में इस दुनिया से चली जाऊं मुझे इससे ज्यादा कुछ नही चाहिए एक इस बेटे का मुह देखने के लिए जान अटकी हुई थी वह भी देख लिया अब मुझे शान्ति मिल गई है और हाथ के इशारे से उसने पुड़िया खाने से इनकार कर दिया।

शाम का अंधेरा उतर आया था। और फिर लगा, वह सो-सी गई थी। मैं उठकर बाहर आ गया।

बाहर ओसारे में वह लालटेन की चिमनी पोछ रहा था। उसने एक बार मेरे कन्धे पर हाथ रखकर मुझे प्यार-सा किया। लगा हाथ कुछ झिझक-सा रहा था।

झिझक को समझ सकता था पर हाथ की मेहरबानी को समझ नहीं सकता था। कुछ हैरान होकर उसकी तरफ देखा। लगा वह कुछ कहना चाहता था पर फिर वह कोठरी की तरफ देखकर चुपचाप लालटेन की चिमनी पोछने लगा।

एक सन्देह-सा हुआ—जैसे वह सब कुछ जानता था। और मुझसे कहना चाहता था—मैंने क्षमा कर दिया है मैं, एक आम दुनियादार इन्सान होकर और तू उसे क्षमा नही कर सकता ?

मैंने एक बार अपने वेश की तरफ देखा—सिर से पाव तक मैंने गेरुआ भगवान् के नाम वाला वेश पहना हुआ था। और लगा उसके सफेद कपड़े मेरे वेश को एक उलाहना-सा दे रहे थे

एक बार फिर पलटकर देखा—वह ओसारे में खड़ा एक सफेद

ड़े के टुकडे से अब भी लालटेन की चिमनी पोछ रहा था। चिमनी ा नही कब की धुआई हुई थी, या कोई काला-सा धब्बा चिमनी पर उतर नही रहा था···

पंद्रह

यह कैसा अधेरा है, कही खत्म ही नही होता···

कोख का अंधेरा हर कोई झेलता है। पर उसका एक गिना-चुना मय होता है। और वह जैसे-तैसे गुजर जाता है। पर मेरा यह अधेरा ुजरता क्यो नही ? क्या समय मुझे अधेरे की कोख मे डालकर फिर निकालना भूल गया है ? और मुझे, अधेरे की कोख मे पडे हुए ही बरस र बरस गुज़रते जा रहे है ?

साई भगतराम एक दिन एक मूर्ख पडित की कथा सुना रहा था— कि एक गाव की स्त्रिया जब एक पडित से तिथि-त्यौहार पूछने जाती— और मूर्ख पडित से जन्त्री न पढी जाती, तो वह बहुत कच्चा पड़ जाता। आखिर उसने सोच-सोचकर एक उपाय ढूढा। मिट्टी की एक कुलिया रख ली, और पडवा का दिन पूछ-पुछाकर, उसने अपनी बकरी की एक मेगनी उस कुलिया मे डाल दी। दूसरे दिन एक और मेगनी डाल दी, तीसरे दिन एक और। इस तरह रोज एक मेगनी वह याद से उस कुलिया मे डाल देता। जब कोई स्त्री तिथि पूछने आती, वह कुलिया की मेगनी गिनता, और उसके मुताबिक बता देता कि उस दिन क्या तिथि थी। कुलिया मे एक मेगनी होती तो पडवा होती, दो होती तो दूज, तीन होती तो तीज·· सो काम चलता गया। पर एक दिन पडित जी की कुलिया कही आगन मे पड़ी रह गई, और आगन में खड़ी

बकरी न जब मेगनी की ता कुलिया मुह तक भर गई। अगले दिन एक स्त्री तिथि पूछने आई, पडित ने कुलिया देखी, तो मगनियों की गिनती ही न हा स्त्री ने स्वय ही कहा होनी तो आज नौमी है।' पडित जी ने भी उस समय टालने के लिए कह दिया है तो नौमी पर अपार नौमी है।

मन की हालत रग्रामी सी है। पर यह हास्यास्पद बात याद आ गई है। लगता है, समय भी एक मूख पडित है। मेरी बारी अधेरे दिना की गिनती करता हुआ अपनी कुलिया को रात आगन म ही रख गया था—और अब मेरी नौमी का अपार-नौमी कहकर अपनी मूखता छुपा रहा है।

अपार अधेरा।

और लगता है—कोख मे से निकलकर मैं सीधा मदिर की गुफा मे आ गया हू और गुफा पता नही कितने सौ साल लम्बा है।

हर सवाल अधेरे की उपज होता है—सिफ यह बात अलग है कि सवाल छोटा हो तो वह एक बालक की तरह घुटए घुटुए चलता है और रोता है पर अगर बडा हो तो वह काली दीवारो को हाथो स टटोलता और उनम सिर पटकता है

कोख क अधेरे म मैंने सिफ हाथ पर ही मारे हाने मैंने ता घुटुए चलना भी गुफा के अधेरे म सीखा था और अब मरे माथे की जवानी गुफा की दीवारा स सिर मार रही है

अधेरा उसी तरह है—सिफ सवाल बडे हो गए हैं—मरे अगा का तरह

सोलह

आज गले में पहना हुआ ढीला-सा चोला भी मेरे अगो में फसता-सा लग रहा था···

अगो की गोलाइयो मे जैसे कुछ नोके निकल आई हो···

कई बरस हुए, जब एक स्कूल में पढता था, एक दिन मेरा एक सहपाठी लडका हसी-खेल मे मुझे एक लारी मे बिठाकर पठानकोट ले गया था।

पठानकोट के खुले बाजारो में नही, सकरी गलियो मे। और वहा उन गलियो मे औरते ही औरते थी—छोटी-छोटी चादी की मुरकिया पहने, स्कूल मे पढती लडकियो जैसी भी, और होठो पर ददासा मलकर बैठी हुई बडी-बडी स्त्रिया भी, और दहलीजो मे बैठकर हुक्का पीती बडी-बूढिया भी।

कही कोई मर्द नही था। जैसे छोटी स्त्रियो को बडी स्त्रियो ने आप ही जन्म दिया हो।

हम दोनो लडके, स्कूल मे पढती उम्र के, वहा खोए-खोए-से लगते थे—या गुल्ली-डडा खेलते अपनी खोई हुई गुल्ली को ढूढते-ढूढते, वहा, उन गलियो मे पहुच गए लगते थे।

बूढी स्त्रिया हुक्के की गुडगुड की तरह मुझे हसती लगी थी। अभी यह खैर थी कि मेरे साथी ने लारी मे चढने से पहले मेरे गेरुए चोले को गले मे से उतरवाकर अपनी एक कमीज और एक सफेद पजामा मुझे पहना दिया था। उसका बन्दोबस्त वह पहले ही करके आया था। सुबह घर से आते समय दोनो कपडे अपने बस्ते मे डाल लाया था।

वह उन औरतो का कुछ वाकिफ भी लगता था। एक-दो को उसने "मा, राम सत" भी कही थी।

कई बार यह भी सोचना चाहा कि यह मैं नही था, मेरे दोस्त का सिफ कमीज-पजामा था जो लारी म बैठकर वहा गया था, पर वह कमीज पजामा गले से उतारकर भी सारे कुछ का दोष गले से नहीं उतार सका था।

फिर यह भी सोचना चाहा था कि इसमे इतना दोष नही था। दोष सिफ सस्कारो मे था। तो भी इसको दोहराने का कभी ख्याल नही आया था।

यह ख्याल सिफ आज आया था। आज गले मे पहना हुआ ढीला चोला भी अगो से अटकता लग रहा था। अगो की गोलाइयो म जसे कुछ नोकें निकल आई हो।

और मुझे लगा—आज मेरी हड्डिया किसी बौराय हुए बल के सीगो की तरह तनी हुई है जो किसीके पहलू मे धसना चाहती थी

गाव से बहुत दूर जाकर गेरुए चोले को उतार दिया। कपडे की एक पोटली सी बाधकर साथ ले गया था—धारियो वाला पजामा लकीरो वाली कमीज और सिर पर लपेटने के लिए एक लम्बा-सा अगोछा

भेष बदल गया। लारी मे बठकर सोचा कि वह मैं नही था, वह एक भेष लारी म बठा हुआ था

पर वहा पहुचकर किसी सकरी गली की तग कोठरी म बैठकर, जब किसी लाल या काशनी रग म डूबना चाहा उसके किनारे पर ही पैर अड गए।

अगो का सारा तनाव जसे अगो से निकलकर परो म आ गया था। पर जमकर खडे हो गए।

परो को देखना चाहा, दिखे नही। वह काल्पनिक फूलो के ढेर में छुपे

हुए थे।

"तू यह फूल क्यो लाई है ?" शायद मैंने वहुत गुस्से से कहा था।

कोठरी मे से एक सहमी-सी आवाज़ आई थी—"फूल कहा है ? यहां कोई फूल नही। मैं कोई फूल नही लाई हू।"

पर वहां फूलों का एक ढेर लगा हुआ था—इतना वड़ा कि मेरे दोनो पैर उसमे ढके हुए थे। मैं न अपने पैरो को देख सकता था, न हिला सकता था।

किसीने उस कोठरी में मेरी सहायता भी करनी चाही थी, मेरी वाह पकड़कर मुझे वहा से हिलाना चाहा था, शायद वैठाना चाहा था, शायद कही ले जाना चाहा था···

पर दोनो पैरो के ऊपर कोई हथेलिया भी छू रही थी···

और पैर उन हथेलियो की छुअन से शायद मूर्च्छित हो गए थे···

मूर्च्छित पैरो को शायद आगे नही वढ़ा सकता था, पर पीछे घसीट सकता था।

घसीट-घसाटकर फिर अपने डेरे मे लौट आया हूं।

अगो की गोलाइयो से सभी नोके झड गई है और मेरा गेरुआ चोला सहमकर मेरे गले से लगा हुआ है।

सारा वदन सूखा है—किसी रंग में नही डूवा। और शायद इसी सूखेपन को पवित्रता कहते हैं···

पर पैर सीले है। शायद वहुत देर गीले फूलो के ढेर मे पड़े रहे थे इसलिए।

या शायद पैरो की आखो मे आसू आ गए हैं···

सुन्दरा···सुन्दरा···जादूगरनी ! आज तूने यह मेरे साथ क्या

किया है ?

यह 'क्या मेरी देह से बाहर है पर फिर भी मेरी देह क अन्दर है

स्कदपुराण म कथा आती है कि सूरज की एक पुत्री छाया के गर्भ से पदा हुई। क्या सूरज क भोग के समय भी छाया का अस्तित्व कायम रहा था ? जरूर रहा होगा, नही तो उसका नाम छाया कसे होता।

तो सूरज के सम्मुख होकर भी छाया का अस्तित्व सम्भव है ? मैंने सुन्दरा को त्यागा था, पर उसका अस्तित्व इस त्याग के सामने भी खडा है

कुछ रिश्ते कसे होते हैं जो हर हाल म रहते हैं। स्वीकृति म स जन्मते कायम रहते ठीक था। पर यह अस्वीकृति म स भी जन्म ले लेते है, और सिफ जन्म नही लेते, इन्सान की उम्र के साथ भी जीते हैं और उम्र के बाद भी जीते हैं

ब्रह्मवर्त पुराण का एक कथा याद आई है—विष्णु का शखचूड की स्त्री तुलसी का सत भग करना था, इसलिए एक दिन उसने शखचूड का रूप धारण किया और तुलसी के साथ भोग किया। तुलसी को जब इस छल का पता लगा उसने विष्णु को शाप दिया कि वह पत्थर हो जाएगा। विष्णु ने भी उसे शाप दिया कि उसके सिर के बाल तुलसी का पौधा बन जाएग। और उसका शरीर गडकी नदी बन जाएगा। गडकी नदी म से अब तक जो पत्थर मिलते है वे विष्णु का रूप है—शालग्राम। वह रिश्ता अब तक कायम है। यहा तक कि लोग कार्तिक की अमावस को तुलसी की पूजा करते तुलसी के पौधे का और शालग्राम का विवाह रचाते हैं

यह कैसे शाप थे जिन्होंने वर का रूप धारण कर लिया ? सुन्दरा का त्याग पता नहीं वर था कि शाप। पर जो कुछ भी था वह कायम

है। मेरी देह से बाहर है, पर फिर भी मेरी देह के अन्दर है···

शायद वरदान और शाप भी सूरज और छाया की तरह एक ही समय, एक ही जगह, इकट्ठे रह सकते है···

पृथ्वी का नाम, जिस राजा पृथु के नाम से पडा, उसका जन्म उसके मरे हुए पिता वेगु की दाई जाघ मे से हुआ था—वेगु धार्मिक राजा नही था, इसलिए ऋषियो ने कुश के तिनको से मार-मारकर उसे मार दिया, पर राज-काज के लिए आखिर किसी की ज़रूरत थी, इसलिए मरे हुए वेगु की एक जांघ को मलना शुरू किया। पर उस जाघ मे से जिस बालक ने जन्म लिया वह बहुत भयानक शक्ल का था, उसको राज्य नही सौपा जा सकता था। इसलिए ऋषियो ने फिर मरे हुए राजा की दाई जाघ को मलना शुरू किया। इस दाई जाघ मे से एक प्रकाश से चमकते बालक ने जन्म लिया, वही बालक पृथु था···

इन्सान की एक जाघ में यदि भयानकता वास करती है तो दूसरी जाघ मे अनन्त सौन्दर्य। खून के एक ही चक्कर में वर भी, शाप भी···

सुन्दरा कहीं नही, पर है···

सत्रह

मन्दिर के पास वाले जगल के पिछवाडे वाली खड्ड आज धुध से नाको-नाक भरी हुई है। धुध इतनी गाढी और जमी हुई लगती है, लगता है—अगर मैं उसपर पैर रखकर चलू, तो अडोल खड्ड के परली तरफ पहुच सकता हूं।

पेडो की काली, नीली और हरी परछाइया खड्ड की धुध पर बडी स्थिरता से लेटी हुई है। सिर्फ किसी-किसी वक्त हिलती और करवट

लेती सी लगती है।

पिछले दिना एक यात्री यहा आया था। पता नही कौन था, सिफ एक रात का बसरा करके आगे कुल्लू की पहाडियों की तरफ चला गया। कहता था फिर वापसी पर आऊगा। अभी आया नहीं, पर आएगा, क्योकि भार हल्का करने के लिए किताबो का एक गट्ठर अमानत छोड गया है।

सिफ वही नही अपनी याद भी छोड गया है आज बार बार उसकी याद आ रही है।

जिस दिन आया था उस दिन दूर पास कहीं धुध नही थी पर जब मैंने उसे पूछा कि वह किस शहर से आया था तो उसने हसकर कहा था, धुध वाले शहर से।

पूछा था कि वह शहर कहा है तो हस पडा था, 'हर शहर धुध वाला शहर है,' और उसने जरा ठहरकर कहा था 'हमारी दुनिया म वह कौन सा शहर है जो धुध वाला शहर नहीं।'

मैंने चारो तरफ देखा था और दूर धौलाधार की पहाडिया की तरफ भी। वह मेरे प्रश्न को समझकर हस पडा था और उसने कहा था — पत्थर हर जगह दिखत है पर इस धुध में इसान का इसान का मुह नहीं दिखता।

मैंने एक बार उसकी तरफ देखा था। फिर अपनी तरफ। जसे पूछ रहा होऊ—'क्या तुझे मेरा मुह नहीं दिखता ?

वह कुछ देर चुप रहा था, फिर धीरे स उसने कहा था—'जो मैं यह कहू कि मुझे तेरा मुह नही दिखता, सिफ तेरा जोगिया वेष दिखता है फिर ?

मुझे यह लालच नहीं था कि मेरा मुह उसे दिखे, और इस मुह के पीछे 'मैं' हू वह भी उसको नजर आऊ इसलिए मैंने भी हसकर कह

दिया, "चलो, मुह की पहचान न सही, जोगिये वेश की ही सही, क्या यह पहचान के लिए काफी नही है ?"

"जिस हिसाब से दुनिया चल रही है, उस हिसाब से काफी, है" उसने कहा था, और बरामदे के एक कोने में कम्बल बिछाकर चुपचाप लेट गया था।

शाम का हलका-सा अधेरा था, देख सकता था कि अभी वह सोया नही था। उसके हाथ के पास एक दीया, और पानी का कटोरा रखकर, एक बार गौर से उसके मुह की तरफ देखा था। मुह के बारे में कुछ और नही सोच रहा था, सिर्फ यह कि आज तक के देखे हुए चेहरो में वह कुछ अलग-सा लग रहा था, और उसे कुछ घडियो के लिए मै अपने ध्यान में रखना चाहता था—जैसे कोई विलक्षण फूल तोडकर कुछ घडियो के लिए उसे अपने सिरहाने के पास रख ले।

पीठ मोडने लगा था, जिस वक्त उसने कहा था, "जोगिये वेश वाली बात का गुस्सा मत करना दोस्त।"

हसी आ गई थी, इसलिए जवाब दिया था, "जोगिये वेश को तो गुस्सा शोभा नही देता," पर साथ ही ध्यान आया था कि वह ऋषियो की जबान ही होती थी, जो बात-बात मे क्रोधित हो उठती थी और शाप दे देती थी।

इसलिए एक गहरा सास लेकर यह भी कह दिया, "क्रोध करेगा तो जोगिया वेश क्रोध करेगा, मैं क्यो करूगा ?"

वह कधो पर तानी हुई गर्म चादर को, हाथ से परे करके, कम्बल पर बैठ गया, और कहने लगा—"यह बात तूने बढिया कही है। खुश होते है तो वेश ही खुश होते है, क्रोध करते है तो वेश ही क्रोध करते है, इन्सान है ही कहा ? अगर कही है भी, तो मुझे तो धुध मे दिखते नही···"

फिर वह खिलखिलाकर हस पड़ा और कहने लगा—"सारी दुनिया

लती सी लगती हैं ।

पिछले दिना एक यात्री यहा आया था । पता नही कौन था, सिर्फ एक रात का बसेरा करके आगे कुल्लू की पहाडियों की तरफ चला गया। कहता था फिर वापसी पर आऊगा । अभी आया नहीं पर आएगा, क्योंकि भार हल्का करने के लिए किताबो का एक गट्ठर अमानत छोड गया है ।

सिर्फ वही नही अपनी याद भी छोड गया है, आज बार बार उसकी याद आ रही है ।

जिस दिन आया था, उस दिन दूर-पास कहीं धुध नही था पर जब मैंने उसे पूछा कि वह किस शहर से आया था, तो उसने हसकर कहा था, 'धुध वाले शहर से ।

पूछा था कि वह शहर कहा है तो हस पडा था "हर शहर धुध वाला शहर है' और उसने जरा ठहरकर कहा था, "हमारी दुनिया म वह कौन सा शहर है जो धुध वाला शहर नहीं ।'

मैंने चारा तरफ देखा था और दूर धौलाधार की पहाडिया की तरफ भी । वह मेरे प्रश्न को समझकर हस पडा था और उसने कहा था — पत्थर हर जगह दिखते हैं पर इस धुध म इसान को इसान का मुह नहीं दिखता ।

मैंने एक बार उसकी तरफ देखा था । फिर अपनी तरफ । जसे पूछ रहा होऊ—क्या तुझे मेरा मुह नहीं दिखता ?

वह कुछ देर चुप रहा था फिर धीरे स उसन कहा था— 'जो मैं यह कहू कि मुझे तेरा मुह नहीं दिखता, सिर्फ तेरा जोगिया वेश दिखता है फिर ?

मुझे यह लालच नहीं था कि मेरा मुह उस दिखे और इस मुह के पीछे 'मैं हू वह भी उसको नजर आऊ, इसलिए मैंने भी हसकर कह

या,-"चलो, मुह की पहचान न सही, जोगिये वेश की ही सही, क्या यह हचान के लिए काफी नही है ?"

"जिस हिसाब से दुनिया चल रही है, उस हिसाब से काफी, है" उसने हा था, और बरामदे के एक कोने में कम्बल बिछाकर चुपचाप लेट या था।

शाम का हल्का-सा अधेरा था, देख सकता था कि अभी वह सोया ही था। उसके हाथ के पास एक दीया, और पानी का कटोरा रखकर, एक बार गौर से उसके मुह की तरफ देखा था। मुह के बारे में कुछ और नही सोच रहा था, सिर्फ यह कि आज तक के देखे हुए चेहरो मे वह कुछ अलग-सा लग रहा था, और उसे कुछ घडियो के लिए मै अपने ध्यान में रखना चाहता था—जैसे कोई विलक्षण फूल तोडकर कुछ घडियो के लिए उसे अपने सिरहाने के पास रख ले।

पीठ मोडने लगा था, जिस वक्त उसने कहा था, "जोगिये वेश वाली बात का गुस्सा मत करना दोस्त।"

हसी आ गई थी, इसलिए जवाब दिया था, "जोगिये वेश को तो गुस्सा शोभा नही देता," पर साथ ही ध्यान आया था कि वह ऋषियो की जबान ही होती थी, जो बात-बात मे क्रोधित हो उठती थी और शाप दे देती थी।

इसलिए एक गहरा सास लेकर यह भी कह दिया, "क्रोध करेगा तो जोगिया वेश क्रोध करेगा, मैं क्यो करूगा ?"

वह कधो पर तानी हुई गर्म चादर को, हाथ से परे करके, कम्बल पर बैठ गया, और कहने लगा—"यह बात तूने बढिया कही है। खुश होते है तो वेश ही खुश होते है, क्रोध करते है तो वेश ही क्रोध करते है, इन्सान है ही कहा ? अगर कही है भी, तो मुझे तो घुध मे दिखते नही…"

फिर वह खिलखिलाकर हंस पडा और कहने लगा—"सारी दुनिया

कपड़ा मे बटी हुई है, वेशा मे—फटे हुए चीथड़ा वाले, काम-काजी मजदूर, अधमैले कपड़ो वाले, छोटे छोटे दुकानदार, चमकते कपड़ो वाले बड़े-बड़ दुनियादार " और मेरा हाथ पकड़कर मुझे भी अपने कम्बल पर बिठाते हुए कहने लगा, 'और किमख़ाब पहनने वाले राजा और मत्री, इस लोक के रक्षक और गेरुए वेशो वाले परलोक के रक्षक।'

मेरे कधे पर उसने जोर से एक हाथ मारा, और फिर कहा "और तो और, धरती के टुकड़े भी वेशा से ही पहचाने जाते हैं—अपने अपने झण्डा से। और उन धरती के टुकड़ा की रखवाली भी इसान नही करते, वर्दिया करती हैं अगर इसान कही होते, तो लडाइयो की क्या जरूरत थी भला कही सचमुच का इसान भी सचमुच क इसान को मार सकता है? यह सब वर्दियो और वेशा की लड़ाई है झण्डो की लड़ाई

" उस एक सास सी चढ गई थी। जसे सांस बहुत बड़ी थी और छाती बहुत छोटी थी। और लग रहा था—कपड़ो का वेश तो क्या, उसकी रूह को उसके बदन का वेश भी तग लग रहा था

"तू कोई भगवान् को पहुचा हुआ इसान लगता है," मैंने उसकी पीठ पर थपकी सी मारी थी, और उसके कधा से उतरी हुई चादर उसके कधो पर ओढा दी थी।

वह हसा नही, बल्कि कुछ उदासीन-सा हो गया। और कहने लगा, 'भगवान् के पास तो किसी फुरसत के वक्त पहुच लगे। पहले अपने आपके पास पहुच लें इस युग म भगवान् तो क्या दिखना है अभी किसी को अपना मुह भी नही दिखता

कुछ कहने के लिए मचल-सा गया था। मैं नही, शायद मेरा गेरुआ वेश मचल गया था। पर अपने वेश को मैंने स्वय ही चुप सा करवाया, और वहा से उठ बैठा।

सुबह मक्की की रोटी और गुड की डली, मैंने जब उसको जाते हुए

उसके पल्ले से वाध दी, उसने अपनी गठरी-पोटली को ज़रा हाथ से तोला, और फिर कुछ किताबो का भार उससे हल्का करके, गठरी और पोटली उठा ली।

"यह मेरी अमानत। फिर जब इस राह से गुज़रूगा, ले लूगा," उसने कहा था।

"पर जो कुछ छाती मे डाला हुआ है और मस्तक मे भी, वह भी तो वहुत भारी है," मुझे हसी-सी आ गई थी।

"उसे ढोने के लिए ही तो इस शरीर की ज़रूरत है, नही तो यह शरीर क्यो सभाले फिरना था।" वहां हस पडा था।

वहुत-से यात्री आते है, जाते हैं। पर जो भी आते हैं, मन्दिर की नदी मे से पानी के चुल्लू भरते, जैसे नदी को कुछ रीता ही करते है। पर वह जव हंसा था, मुझे लगा—उसकी झरने जैसी हसी नदी के पानी मे मिलकर, नदी को और भर गई थी।

कहा कुछ नही, सिर्फ जाते समय यह पूछा—"इन पुस्तको को वाचने का हक वर्जित तो नही?"

उसके, जाते हुए के, पाव पलभर को ठहर गए थे। उसने गौर से मेरे मुह की तरफ देखा था—जैसे किसी घुध तह की में से मेरे मुह को ढूढ रहा हो।

"ज्ञान को धारण करना, शिव जी की तरह गगा को धारण करने के वरावर है," उसने कहा और मुस्करा दिया।

"पुराणो मे गगा के वारे मे जो भी प्रसग आते हैं, उनकी जगह, जो तेरा यह कथन प्रसंग वनकर आता तो वहुत अच्छा था।" अनायास ही मेरे मुह से निकला।

"पुराणो मे क्या प्रसंग आते हैं?" उसने पूछा।

"कई आते है," मैंने जवाव दिया, "जिनमें से एक यह है कि यह

वामन-अवतार के पैरों का जल है। जब वामन का पर ब्रह्म लोक तक पहुचा, तब ब्रह्मा ने उसका पर धोकर उस जल को कमडल मे डाल लिया, और भगीरथ की प्रार्थना पर ब्रह्म लोक से छोड दिया। शिव जी ने उस जल को जटाओ म सभाल लिया और फिर जटा खोलकर उस जल को पृथ्वी पर छोडा तो वही जल 'गगा' कहलाया।

"और ? ' उसने फिर पूछा।

और वाल्मीकीय रामायण मे आता है कि हिमालय पवत क घर मेनका क उदर से गगा और उमा दो बहनें पैदा हुइ। एक बार शिव ने अपना वीय गगा मे डाल दिया। गगा उसे धारण न कर सकी, और गभ को फेंककर ब्रह्मा के कमण्डल मे जा रही। फिर भगीरथ की प्रार्थना पर कमण्डल मे से निकलकर पृथ्वी पर आई

"काफी दिलचस्प कहानियाँ हैं। वह ज़ोर स हसा, और कहने लगा 'शायद इन कहानियो मे ही गगा को पाप का चिह्न कहा गया है "

'गगा को कि शिव जी के वीय को, जिस गगा धारण न कर सकी ? किसी ज्ञान को गभ मे धारण कर सकना ही तो मुश्किल था

मैंने जब कहा तो हम दोनो इस तरह हसे, जसे हम दोनो स्पष्टता और अस्पष्टता क बीच म खडे बडे खाए हुए लग रहे थे।

यह बात अलग है कि दूसरे पल वह चला गया और मैं उसके जाने के बाद भी कितनी ही देर तक वहा खडा रहा।

उस दिन धुध नही थी, पर आज मन्दिर के पास वाले जगल के पिछवाडे वाली सडक में धुध भरी हुई है

वसे जिस धुध की बात उसने की थी, वह उस दिन भी थी आज भी है और शायद हमेशा होगी

सिफ यह कह सकता हू कि आज धुध दोहरी है

पर यह दोहरी धुंध पता नही कैसी है—गाढ़ी, सफेद, और वर्फ की तरह जमी हुई—कि पेड़ो की काली, नीली और हरी परछाइयो की तरह। किसी के यहा होने की परछाईं भी इस पर अडोल पड़ी लगती है…

यह पता नही मेरे वजूद की परछाईं है, कि उस यात्री के रूप मे किसी ज्ञान के वजूद की परछाई…

अठारह

आज लगता है—उस यात्री को मैंने वहुत नज़दीक से देखा है। उसे भी और अपने को भी।

उसकी अमानत किताबो मे से एक किताव मैंने पढी, किताव का हर पन्ना जैसे शीशे का एक टुकड़ा था। प्रयत्क्ष अपनी सूरत. भी नज़र आती रही, और अपनी कल्पना में पड़ी हुई उस यात्री की सूरत भी।

आम शीशे में और किसी रचना के शीशे में शायद यही अतर होता है…

किताव वाली कहानी का पात्र जापान का कोई स्कूल मास्टर है, एक दिन अगस्त के महीने मे वह अलोप हो जाता है, सवको यही पता है कि वह समुद्र के किनारे छुट्टियां मनाने गया है। उस शहर से समुद्र का किनारा सिर्फ आधे दिन के सफर के फासले पर है। और फिर उसकी कोई खवर नही मिलती। अखवार के द्वारा भी उसकी पडताल होती है, और पुलिस द्वारा भी, पर कोई सुराग नही मिलता।

लोगो का सवसे पहला ख्याल जिस वात पर जाता है, उस वात का सिरा सिर्फ औरत से जुड़ता है। पर उसकी वीवी लोगों को यकीन

दिलाती है कि लोगो की कल्पना की औरत कहीं कोई नहीं। इसलिए वह सिरा उस कल्पना स भी खुल जाता है, और सिफ हवा म लटकता रह जाता है।

इतना-सा सबको पता है कि वह जब समुद्र के सफर के लिए घर से निकला था उसके हाथ में एक खाली बोतल थी, और एक छोटा-सा जाल। कीडो की नई किस्मे ढूढने मे उस आदमी की दिलचस्पी थी। इसलिए एक खाली बोतल और एक छोटा-सा जाल ही उसके हथियार हो सकत थ।

और फिर जब गुमशुदा आदमी को खोए हुए सात बरस गुजर जाते हैं तो सिविल कोड के सेक्शन तीस के मुताबिक उसे मर चुका कह दिया जाता है।

पर मौत क जाने पहचाने अर्थों से अलग भी मौत के अथ होत हैं वह समुद्र के पास एक गाव म पहुचकर जब गाव की खत्म होता सीमा से आगे बढता है—धरती उसे सफेद सी और बिल्कुल सूखी-सी नजर आती है। वही वीरानगी फिर रेतीली जमीन बन जाती है। पर रेत म समुद्र की गध मिली होती है इसलिए वह माथे का पसीना पोंछकर चलता जाता है। फिर एक बहुत ही अकेला-सा गाव उसे दिखता है—आलुओ का कुछ खेती हुई भी दिखती है पर सफेद रेत का प्रसार फिर भी खत्म नही होता लगता। और एक अजीब बात यह कि रेत की सडक कदम-बकदम ऊची होती जाती है—हालाकि समुद्र की तरफ जाती सडक कदम-बकदम नीची होती जानी चाहिए थी। वह एक बार जेब म डाला हुआ नक्शा खोलकर देखता है राह जाती हुई एक लडकी को कुछ पूछना है, पर जवाब नहा मिलता। किसी किसी जगह सीपियो के ढेर और मछलिया पकडने के जाल दिखते हैं, वह उनसे भी एक तसल्ली-सी ढूढता है, और चला जाता है। और फिर एक और अजीब

बात कि सडक के ग्रासपास वने घर सड़क से ऊंचे होने चाहिए थे, पर वह दोनो तरफ सड़क से नीचे है—रेत के अम्वारो मे डूबे हुए। और फिर अचानक आती एक उतराई के वाद उसे झागो-झाग समुद्र दिखाई देने लगता है। यहा रेतो के टिब्बो पर ही उसे गैर मामूली कीड़े ढूढने थे।

रेत का हिलता प्रसार उसे वड़ा दिलचस्प लगता है—सरकता, रेंगता, जैसे वह कोई जीती-जागती और वेचैन रूह हो।

रेत उसके पैरो के नीचे भी हिलती है, और उसके पैर चौंककर रेत के कानून की ओर देखते है···

कुछ बूढे आदमी कुछ घवराए हुए-से उसे सरकारी आदमी समझते है, पर वह विश्वास दिलाता है, कि वह एक साधारण स्कूल मास्टर है। रात विताने के लिए वह कोई जगह पूछता है तो एक जना उसे मदद का विश्वास दिलाता है। शाम ढल जाती है। उसे कीड़ो की कोई खास किस्म नही मिलती, और वह थककर अपनी तलाश कल पर छोड़ देता है।

रात विताने के नाम पर उसे सड़क पर से उतरती एक गहरी खाई मे वना हुआ एक घर मिलता है। रस्सी की मदद से वह घर की छत पर उतरता है। घर का रास्ता दिखाने आया हुआ वूढा लौट जाता है। वह घर की छत पर ढेर सारी गिरती रेत को देखकर परेशान होता है, पर यह तजरुवा सिर्फ एक रात का सोचकर वह धीरज वाध लेता है।

रस्सी को घर की छत तक लटकाते समय वूढे ने आवाज़ दी थी—'नानी, किवाड़ खोलो।' पर यह यात्री घर की दहलीज़ पर जिस औरत को देखता है, उसकी जवानी अभी ढली नही होती। हाथ मे लालटेन पकडे वह उसका स्वागत करती है।

"इस कोठरी मे एक ही लालटेन है, अगर तू अवेरे मे वैठ सके, तो

में पिछवाड़े बैठकर तेरे लिए कुछ राघ लू औरत कहती है।

'मैं कुछ खाने स पहल नहाना चाहता हू," वह जवाब देता है।

औरत हैरान सी होती है फिर कहती है— जा तू परसो तक इन्तजार कर सके नहाने का इन्तजाम हो जाएगा।

'पर मैंने यहा सिफ एक रात रहना है ' वह जवाब देता है और हैरान होता है कि औरत ने उसकी बात सुनी अनसुनी कर दी है।

खाने क लिए उस मछली का सूप मिलता है, पर औरत जब उसकी थाली पर कागज की छतरी तानती है वह हैरान होता है तो वह बताती है कि यहा रेत इस तरह उड़ती है कि अभी सूप का प्याला छतरी क बिना रेत क कणो स भर जाएगा। और वह बताती है कि हवा का रुख जो इस भार हो, तो सारी रात उस छत पर से रेत उखेरनी पड़ती है नहीं तो दूसरे दिन तक सारी कोठरी रेत म दब जा सकती है।

उसका बदन थोड़ी देर म चिरचिरा हो जाता है और उड़ती रेत उसके गले में, नाक मे और आखो म एक तह की तरह जमने लगती है।

दूसर दिन सवेरे-सवेरे बाहर दूर म बहुत ऊचाई म आवाज आती है, और रस्सी से एक आदमी के लिए नहीं दो आदमियो के लिए कुछ खाने का सामान नीचे उतार दिया जाता है। अजायबनमा सा उसकी आखो क आगे रेत क कणों की तरह घूमते हैं पर उसकी समझ म कुछ नहीं पड़ता। औरत लगातार एक फावड़े म दरवाजे क सामने से रेत को हटाने म लगी हुई है।

मैं तेरा हाथ बटाऊ ? वह औरत से पूछता है।

पर औरत जवाब देती है पहले दिन ही तुझे इतना तकलीफ दू ? नहीं पहले दिन नहीं वह परेशान होता है फिर भी उसके हाथ म फावड़ा पकड़कर उसकी मदद करना चाहता है। औरत कहती है—

"अच्छा, जो तुझे आज ही काम पर लगना है तो तेरे हिस्से का फावड़ा उन्होने भेज दिया है, वह ले ले।"

"वह कौन ?" अजीव परेशानी है। वह वहा से उल्टे पाव ही चला जाना चाहता है, पर बाहर की सड़क तक पहुचने के लिए रेत की चढाई किसी तरह भी पार नही की जा सकती···

वह रेत का कैदी होकर रह जाता है···

गाव के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए सारी रात रेत को वुहारने का काम ज़रूरी है, और इस काम के मज़दूर सिर्फ रेत बुहारते हैं। और उसके बदले गाव के मुखिया उन्हे सूखी हुई मछली, कुछ आटा और कुछ पानी रस्सियो से उतारकर, उन तक पहुचा देते हैं··

"इसका मतलब है कि तुम कुछ लोग सिर्फ रेत वुहारने के लिए जीते हो ?" वह परेशान होकर पूछता है।

"हा, सिर्फ रेत वुहारने के लिए। यह गाव तभी वना रह सकता है। जो हम यह काम छोड दे तो दस दिनो मे सारा गांव रेत के नीचे दव जाएगा···" औरत वताती है, और उसका दार्शनिक मन सोचता है कि रेत के इस कानून के आगे शायद कुछ भी नही हो सकता। वड़ी-वड़ी वादशाहते भी वक्त की रेत मे दव जाती है···पर अस्तित्व क्या है ? शायद पानी के अथाह सागर मे पानी को वुहार-वुहारकर एक निश्चल स्थान वनाने का यत्न···

उसकी निराशा उसके गले मे अटक जाती है, वह रेत की दीवार पर चढकर रेत की इस कवर मे से निकल जाना चाहता है पर···

इस 'पर' का जवाव कही नही···

"उन्होने मुझे, यहा, तेरे पास, रेत का कैदी क्यो वनाया ?" वह हारकर कुछ दिनो वाद उस औरत से पूछता है।

"इसलिए कि मैं अकेली थी, यहां मुझे रेत भी खा जाती, और

कर, या दूध और मधु के रग से मिलाकर

रगो का भी शायद शौक होता है भुलावा डालने का। जो सिर्फ किसी रग की उपमा मे किसी को विरह लिखना हो तो मेरा ख्याल है वह सबसे पहले सप फली की उपमा म कोई विरह लिखेगा। उसके जितना सुन्दर रग किसी फली का नही होता। उसके रग म जसे आग जलती होती है। पर इसी सप फली का दूसरा नाम मौत फली है। इसको बस हाथो से छुआने की देर होती है

आम मिट्टी मे से उगने वाली जडी-बूटियो का जहर सिर्फ हाथो को चढ़ता है, पर इसान के मन मे से उगने वाली जडी-बूटियो का जहर आखो को भी चढता है माथे को भी चढ़ता है सासो को भी चढता है, ख्यालो का भी चढ़ता है और सपना का भी चढता है

कभी कभी नदी की आवाज म से अचानक महत किरपासागर जी की आवाज उभर आती है—कसूर मेरे काना का है आवाज का नही—पर फिर भी ऐसे लगता है जसे वह आवाज मेरे कानो से मजाक-सा करती हो

बस सोचना चाहता हू कि मेरे कान उस आवाज से मजाक करते हैं। पर पता है, यह सच नही। शायद कभी हो जाए पर अभी नही। अभी तक यही सच है कि यह आवाज

यह सब कुछ शायद इसलिए कि उनकी आवाज मे कुछ खास तरह का कुछ था—नदी के पानी का तरह हल्का सा होता भी बडा भारी, और अपने जोर से बहता। काई पत्थर ककड पत्ता या हाथो का मल उसमे फेंक मा द ता उसस बपरवाह उसका बहाकर ल जाता, या परा म फेंककर उसके ऊपर गुजर जाता।

पानी के बहाव की शायद सिफ आखें होती हैं, कान नही होते। उनकी आवाज भी एक सीध म चली जाती थी, इद गिद की बातो को

सुनकर कभी खड़ी नही होती लगती थी। साधु डेरे भी, घर-गृहस्थी की तरह, झगडो-वगड़ो और निन्दा-चुगली से वसते हैं—जाले इनकी दीवारों पर भी लगते हैं। पर महंत किरपासागर जी की आवाज़ के वारे मे मैं यह ज़रूर कह सकता हूं कि वह नदी के वेग की तरह, इस सव कुछ को वहाकर ले जाती और उन्हे आखे भरकर देखती भी नही थी।

यह आवाज़ दो तरह की थी—एक भारी और वेगवती, और दूसरी वहुत सूक्ष्म, उदास और पवन की तरह पवन मे मिलती, और अपने अस्तित्व का सवूत भी चुराती।

पहली तरह की आवाज, एक खास तरह के प्रभाव को लेकर चलती थी, पर दूसरी तरह की—इससे विल्कुल वेपरवाह होकर।

कोई जव भी वात करता है सिर्फ पहली तरह की आवाज़ की ही वात करता है। शायद वह प्रत्यक्ष थी, इसलिए। और शायद लोगो की अपनी हस्ती उसके प्रभाव के नीचे झुक जाती थी, इसलिए। पर मेरे लिए इस तरह नही। सोचता हू—वाहर दिखते वोझ को कोई हाथ से अपने ऊपर से उतार सकता है, पर वह जो दूसरी किस्म का कुछ होता है, जो सासो मे मिलकर छाती मे उतर जाता है, उसका क्या करे।

मन्दिर के साथ वाले जगल मे, यह दूसरी तरह की आवाज़ मैंने कई वार सुनी थी। वह अकेले, रात-प्रभात, कभी उस जगल मे खो गए लगते थे—आवाज़ को भी शायद, जंगल की शा-शां में मिलाकर, खो देना चाहते थे—एक ही वोल होता था, जो वार-वार होठो से झडता था—"मुद्दतें गुज़र गईं वेयार ओ मददगार हुए।"

यह वोल उनके होठो से पीले पत्ते की तरह झडता था, फिर होठों पर हरे पत्ते की तरह उगता था, और फिर होठो से पीले पत्ते की तरह झडता था...

पजो के वल चलकर मैंने कई वार इस आवाज़ का पीछा किया था।

अपने कानों की इस चोरी से मुझे कोई उलाहना नहीं। सिर्फ कई बार ऐसा होता था कि मेरे कान बहुत दर्द करने लगते थे और लगता था कि एक नफरत मेरे कानों में पीप की तरह भर जाती थी।

पता नहीं, वह असली अर्थों में नफरत थी या नहीं। यदि थी तो इससे बचने के लिए मैं बड़ी आसानी से यह कर सकता था कि कभी वह आवाज़ न सुनता। एक बेपरवाही की रूई कानों में दे सकता था। पर मैं तो उस आवाज़ का पीछा करता था। वह मुझे बुलाती नहीं थी, पर फिर भी पंजों के बल चलकर मैं उसके पीछे जाता था। उसके बिना कानों को जैसे एक बेचैनी सी होती थी।

आज आवाज़ कोई नहीं, पर उसकी कल्पना अभी भी बाकी है। वही उस मरी हुई आवाज़ को फिर से जीवित कर देती है। और फिर वह सिर्फ मेरे कानों तक सीमित नहीं रहती, कई बार मेरे होंठों तक भी आ जाती है। होंठ उसके भार के तले हिलने लग पड़ते हैं और हिलते हिलते खुद एक आवाज़ सी बन जाते हैं—मुद्दतें गुज़र गईं बेयार औ मददगार हुए।

किसी साईं फकीर ने कहा है—

> कुन फिकुन जदों कीतो ई
> कौतियाँ नी जोरावरियाँ
> जुज़ अपनी तों जुदा कीतो ई
> तेरियाँ कौतियाँ मत्थे धरियाँ[1]

---

[1] तुमने जब कहा कि मैं एक से अनेक हो जाऊँ तब तुमने हमसे ज़बरदस्ती की। तुमने हमें अपने से अलग कर दिया और तुम्हारा किया हमें स्वीकार करना पड़ा।

उस साईं-फकीर ने भी शायद यही एकाकीपन भोगा था, जो महत किरपासागर जी ने वेयार मददगार होते हुए भुगता था…

कुन-फिकुन—मैं एक से अनेक होऊ—

पता नही किस अपार शक्ति को यह ख्याल आया ? सब छोटे-छोटे टुकडो में बंट गए थे—एकाकीपन के टुकडो मे।

महत किरपासागर जी का अस्तित्व भी एकाकीपन का एक टुकड़ा था—और उस टुकडे ने शायद विल्कुल मिट जाने के खौफ मे से एक और टुकडे को जन्म देना चाहा था—मुझे।

किसी के वजूद पर लादी गई किसी की मरजी…
मुझे उनसे नही, उनकी इसी मरजी से नफरत है…

अपना आप नाजायज लगता है, शायद इसलिए यह नफरत जायज लगती है…

बीस

आज वह आया था—वही दीनानाथ। कपड़े साधारण थे, घर के धुले हुए थे, साफ-सुथरे, पर उसके सिमटे हुए अगो से लगकर कुछ सिकुड़े-से लग रहे थे, उसके मुह की तरह दीन-से लग रहे थे, और उसके मुख से निकली वात की तरह झिझकते-से, और गुच्छा-से होते…

उसके गले में कोई अगोछा-सा था और उस अगोछे की कन्नी वह अपने हाथ से ऐसे मरोड़ रहा था, जैसे अभी भी एक कपड़े के टुकडे से लालटेन की चिमनी पोछ रहा हो…

पता नही उस दिन उसको चिमनी पोछते हुए देखकर उसका किस तरह का मुह ध्यान म भड गया था । लगा वह कई बरसा से एक चिमनी का पोछ रहा है

वह बडे एकान्त के समय भ्राया था । यह शायद सयोग नही था, वह वक्त को देखकर भ्राया था । मैं उस वक्त अकेला मन्दिर के पिछवाडे वाले जगल म पगडडिया पर घूम रहा था । रोज शाम का सन्ध्या के समय इस तरह घूमता ह । एक नियम की तरह । लगता है उसको इस नियम का पता था

ये चत के दिन बड भ्रजीब होते है—पेडा की पत्तिया पल पल म रग बदलती है, थोडी सी हवा से भी काप काप सी जाती हैं भ्रौर फिर लगता है जसे वे घबराकर पेडों के परा पर गिर रही हो

उनकी यह दीनता देखकर मन मे कुछ होता है

वह भी जब भ्राया मेर पास मेरे मन को कुछ हुभ्रा

मरा ख्याल है उसने भी एक बार चुपचाप पेडो की तरफ देखा था—पेड जो हर घडी नगे भ्रौर दीन-से हो रहे थे फिर उसने, भ्राखो को भुकाकर पडो की होनी कबूल कर ली थी —

'मैं तुमसे एक बात करने भ्राया हू ' उसने कहा । पर इतना वह मुझे कहता नही लग रहा था, जितना भ्रपने भ्रापको । जैसे कोई पेड भ्रपने को पतझड के भ्राने की खबर बता रहा हो ।

'वह तेरी मा है ' उसने कहा, भ्रौर फिर चुप हो गया ।

पता नही यह बताने वाली क्या बात थी । मुझे पता थी, भ्रौर उसको भी मालूम था कि मुझे पता है ।

"जाने उसके कितने दिन रहते हैं, पता नहीं दो घडिया ही हो, पर उसकी जान भ्रटकी हुई है तूने उस राजकुमारी की कहानी सुनी है जिसकी जान तोते म थी ? वह मारने से नही मरती थी पर जब किसी

ने तोते की गर्दन मरोड दी, उसकी भी गर्दन टूट गई वह भी अभी मरने लायक नही थी, पर उसकी जान उसमें नही, तुझमें है। तेरी एक नजर में। तू नजर मोड़ता है, उसकी जान लटक जाती है···तू उसे एक बार मा समझकर देख, वह मरी हुई भी जी पडेगी· " यह सब कुछ उसने अटक-अटककर भी कहा और एक सास मे भी।

मुझे ऐसा लगा था कि जैसे वह मुझ पर तरस खाकर मुझे गुफा के अधेरे मे से निकालने आया हो, पर उसे यह पता न हो कि अगर उसने दो कदम आगे रखे, तो उसे भी हमेशा के लिए गुफा के अधेरे मे गुम हो जाना होगा।

मुझे जिन्दगी मे अगर किसी पर पहली बार तरस आया: तो उस पर—दिल मे आया कि उसके होंठो पर हथेली रखकर उसे आगे कुछ कहने से चुप कर दू···

हवा तेज नही थी, पर पेडो की पत्तियां झडी जा रही थी। मै हवा को हाथ से रोक नही सकता था।

"वह बडी नेक औरत है···" शब्द उसके मुह में थे, मेरे कान बौरा-से गए। वही घडी सामने आ गई, जब महत किरपासागर जी ने आखिरी स्वासो के समय कहा था, "वह एक पुण्यात्मा है···"

लगा—यह दोनो मर्द, मुझे—एक तीसरे इन्सान को—यह बताने के बजाय, एक दूसरे को बताते, फिर ?

तो क्या फिर भी दोनो के मुह से यह बात निकलती ? सोचा—महत किरपासागर जी जीवित नही, पर उनकी कही हुई बात बाकी है, जो मै यह इस भोले इन्सान को सुना दू ? लगा—यह जो स्वय ही गुफा के अधेरे मे भटकने के लिए आया है, तो मै क्या कर सकता हू·

इसलिए जवाब दिया—"मुझे पता है, महत किरपासागर जी ने भी यही बात कही थी।"

बहुत दिन हुए, महाभारत की एक कथा पढ़ी थी कि एक मुनि ने यज्ञ कराया राजा की ओर से इक्कीस बैल दक्षिणा में मिले, पर मुनि ने वे बैल दूसरे ऋषियों को दान कर दिए और राजा से और बैल मांगे। राजा ने गुस्से में आकर मरी हुई गायें दे दीं। मुनि ने भी गुस्से में आकर राजा के नाश के लिए और यज्ञ आरम्भ किया। वह ज्यों-ज्यों गउओं का मांस काटकर हवन करता गया त्यों-त्यों राजा का राज्य नष्ट होता गया

लगा—मैंने जो बात कही थी, वह भी एक मरी हुई गाय का मांस काटकर हवन में डालने वाली बात थी और उसके साथ अमा इस सामने खड़े इंसान के मन का स्वर्ग नष्ट हो जाएगा

मां उस वक्त मरी हुई गाय की तरह लग रही थी

पर कोई भी स्वर्ग शायद भुलावे के पर्दे में नहीं होता सच की नग्नता में होता है। लगा मैं कुछ भी कहूं, उसके मन के स्वर्ग को नष्ट नहीं कर सकता था। क्योंकि मेरी बात के जवाब में उसने स्वयं ही कह दिया था उन्होंने जरूर कहा होगा क्योंकि यह सच है।'

एक बार यकीन नहीं आया कि मैं सचमुच उसके स्वर्ग को नष्ट नहीं कर सकता। इसलिए फिर कुछ ठहरकर कुछ और स्पष्ट-सा कहा—

'उन्होंने यह भी बताया था कि उस पुण्यात्मा को भगवान् ने स्वयं सपने में दर्शन दिए और हुक्म दिया '

लगा मैंने उसके स्वर्ग को अगर अभी नष्ट नहीं किया था, तो भी एक सेंध जरूर लगा दी थी। और मैंने कहा 'भगवान् ऐसा हुक्म देने के लिए सिर्फ किसी पुण्यात्मा को ही चुन सकता है '

ख्याल था—वह कांपकर पूछेगा—क्या हुक्म ? क्या हुक्म ? पर उसने कुछ नहीं पूछा। सिर्फ यह लगा कि वह कुछ कांपा-सा जरूर था। फिर वह कुछ देर सामने पेड़ों की तरफ देखता रहा, जिनकी टहनियां पल-भर झड़ते पत्तों से नंगी-सी हो रही थीं।

"हा, उस पुण्यात्मा को ही मैने यह हुक्म देने के लिए चुना था। यह मेरा हुक्म था···उसने हमेशा मुझे भगवान् समझा है···" उसने कहा।

लगा—यह कहते हुए न उसका मुह दीन-सा हो रहा था, और न उसकी आवाज हीन-सी थी।

याद आया—पाच-छ दिन पहले, जब उसके घर गया था, उसने भी कुछ ऐसा ही कहा था—"मेरे ऐसे करम कभी नही हुए कि भगवान् मुझे सपने मे दर्शन देते, और कुछ कहते, मैंमे सिर्फ उसका हुक्म माना जिसे मैंने सारी उम्र भगवान् समझा। दर्शन उसे हुए थे, मैंने सिर्फ हुक्म माना···"

लगा एक सास था जो मेरा छाती की हड्डियो मे अटक गया था··

"वह ऐमी नेक औरत है, कि मै अगर उसे सीधा-सादा हुक्म देता, वह रोती, और मेरे पैरो पर गिर पडती कि मै इस हुक्म को वापस ले लू। मै उसका भगवान् था, पर जो भगवान् सामने दिखता हो, उसको यह भी तो कहा जा सकता है कि हुक्म को वापस ले ले···इसलिए मैंने अपना हुक्म उसको उस भगवान् के मुह से सुनवाया, जो दिखता नही। कहा कि मुझे सपने मे भगवान् के दर्शन हुए है और उन्होने हुक्म दिया है कि तेरा सजोग··"

लगा—एक अनन्त पीडा उस आदमी की छाती मे उठी थी। उसने पेड के एक तने से पीठ लगा ली, और पलभर के लिए अपनी आखे, आखो की पलको के नीचे ढाप ली।

फिर उसकी आखो की पलके धीरे से हिली, उसके होठो की तरह। और उसने कहा—"तुझे शिव की मूर्ति के आगे चढाकर जब महत किरपा-सागर जी ने कहा था कि यह बालक आज से शिव जी का पुत्र है, उन्होने सच कहा था। क्या हुआ जो तन उनका था, तेरी मा ने जब उनके तन से पुत्र मागा था, तो उन्होने अपने तन मे शिव का मन डालकर उसे पुत्र

दिया था ''

और लगा—अब उसके मुह पर आया हुआ अनंत दद उसका बन बन गया था। उसने पेड़ के तन से लगी हुई पीठ पेड़ से हटा ली और एक पेड़ की तरह तनकर खड़ा हो गया। और फिर पेड़ पर नए सिरे मे लगे पत्तों की तरह मुस्करा दिया, वह मन भरा था। मैं आप शिव हू। मैंने शिव की तरह जहर का प्याला पिया है '

उसने सचमुच जहर का प्याला पिया है यह सामने दिख रहा था। मैंने आखें नीची कर ली।

''तू सोचता होगा कि तू मेरा पुत्र नही। पर मैं ऐसे नही सोचता। हिसाब सिर्फ लोक का नही होता, परलोक का भी होता है। असली सयोग तन का नहीं होता मन का होता है। तन साथ नही देता था, इसलिए तन की जगह मैंने मन का बरत लिया। उसका तन मेरा मन और तू इस सयोग में से पदा हुआ। मैं किस तरह कहू कि तू मेरा पुत्र नही '

लगा—मेरा माथा झुक गया था। वह कह रहा था ''मैंने तेरी मा पर कोई अहसान नही किया था। वह बेचारी अब भी समझती है कि मैं उसे भगवान् का रूप होकर मिला हू। पर यह मेरा पाप है कि मैंने उसे कभी कुछ और नहीं बताया। पता नही, उसकी आखों में भगवान् का रूप होकर रहने का लालच है ' वह कहता कहता हस सा दिया और फिर कहने लगा— तू उसका बेटा है, इसलिए तुझे अपना बेटा समझकर बताता हू कि मैंने अपनी जवानी म उसके साथ द्रोह किया था। वह अभी डोली म से निकली थी कि मैं उसे छोडकर परदेस चला गया था। धन कमाने के लिए। कमाया भी बड़ा उजाड़ा भी बड़ा। पर धन से ज्यादा मैंने अपने आपको उजाडा। ऐसी बीमारी लगी कि जिसके इलाज के वक्त सयानों ने मुझे बताया कि अब मेरा बच्चा कभी नही चलेगा। बीमारी का खाया हुआ जब घर लौटा, उस नेकबख्त के माथे लगने

लायक नही था। मन फटकारे देता था। पर मैंने उसे बताया कुछ नही। बरस बीत गए। रोज देखता था कि वह एक पुत्र के मुह को तरसती थी। कितनी देर देखता ? उसका कुछ तो कर्ज़ा चुकाना था···जैसे-तैसे उसे तेरा मुह दिखाना था···"

लगा—उसके पाव धरती से ऊचे हो गए थे। इतने ऊचे कि मेरे माथे तक पहुच गए थे··

और शायद उसके पाव चल रहे थे, मुझे लगा, मेरा माथा भी उसके पैरो के साथ-साथ चल रहा था

एक बहुत ही लम्बी राह थी, कुछ नही दिख रहा था। शायद शाम का अधेरा बहुत गाढा हो गया था, कि शायद मै मन्दिर की गुफा मे चल रहा था ·

और फिर एक उजाला-सा हुआ। देखा—उसके हाथ मे एक लालटेन थी। शायद उसने लालटेन अभी जलाई थी···

और देखा—लालटेन की चिमनी पर एक भी दाग नही था। उसने चिमनी के शीशो को पोछ-पोछकर उसके सारे दाग उतार दिए थे ··

और लालटेन की रोशनी में देखा—मेरे सामने मेरी ओर बिटर-बिटर देखता मेरी मा का मुह था ··

मन्दिर के पिछवाडे वाले जगल में से चलता हुआ पता नही किस तरह मैं वहा उसके घर पहुच गया था ·

मेरी बाहे उसके गले की ओर बढी—जैसे कोई बहुत अधियारं गुफा में से निकलने के लिए गुफा का द्वार ढूढता है···

उसके सास मेरे माथे को छू रहे थे कही से बहुत ठडी औ ताज़ी हवा का झोका आया है, और मेरे सासो मे मिल गया है ··

शायद अब सामने, एक कदम की दूरी पर, कैलाश पर्वत है···

इक्कीस

मारे के मारे आसमान ने जमे धरती को अपने हाथो धोया हो

बादल मेरे पावो के नीचे कुछ रेशम सा बिछा रहे हैं

अचानक पेडो की टहनियो ने मेरे गिर्द कुछ लपेट सा दिया है

अभी माथे पर एक ठडी फुहार सी पडी है, कुछ उडते पक्षी सिर के ऊपर से गुजरे है शायद उन्होने अपने पखो से कुछ कुहरा झाडा है

एक सरसराहट सी भी शायद उनके पखो से झडकर मेरी छाती म पड गई है

सूरज की कुछ किरणे शायद सोई हुई बर्फ को जगाने के लिए आई हैं।

नदिया का पानी ऐसे ठुमककर चल रहा है जसे उसने पैरो म चादी की खडाऊ पहनी हुई हो

लगता है—कलाश पवत की सारी सुन्दरता सारी ऊचाई और सारा एकाकीपन मेरा है

एक बडे निमल पानी का सोता मेरी मा के मुह जसा है जिसमे मेरी परछाइ ऊघ रही है

कमल फूलो के तालाब को देखकर अनायास ही महत किरपासागर जी का ख्याल आ गया है

अभी किसी टहनी से एक फूल गिरा था, और अडोल एक हथेली की तरह मेरे पैर को छू गया था। एक पल लगा पैर जसे मूर्छित सा हो गया था

दूर वह गुफा दिख रही है जिसके अधेरे मे मै कई वरस चला हू। मेरा ख्याल है कोई उस अधेरे मे अब भी लालटेन लेकर खडा है···

मेरा ख्याल है शिव और पार्वती पत्थर नही हुए, सिर्फ वहां, मन्दिर की छत के नीचे, एक जगह खड़े, हाथ के इशारे से वता रहे है कि यह गुफा कैलाश पर्वत पर पहुचती है···

लगता है—कैलाश पर्वत की सारी सुन्दरता, सारी ऊचाई और सारा एकाकीपन मेरा है ··

आखिरी पंक्तियां

शॉपेनहावर की जेब में पड़े हुए सोने के सिक्के की तरह हम भी कई लोग—छोटे छोटे शॉपेनहावर—सोने की डली जैसा किसी न किसी सोच का सिक्का जेब में डाले घूमते हैं। शॉपेनहावर बरसों उस घड़ी का इन्तज़ार करता रहा—जिस घड़ी वह सोने का सिक्का दान कर सकता। वह घड़ी उसकी जिन्दगी में नहीं आई। सिक्का उसकी जेब में ही पड़ा रहा। और जिन्दगी की आखिरी सांस तक उसे अपनी जेब का बोझ ढोना पड़ा। शायद हमारी भी कइयों की, यही तकदीर है।

कहते हैं शॉपेनहावर जिस होटल में दो वक्त रोटी खाता था, रोटी की मेज़ पर, रोज़ सोने का एक सिक्का रखकर रोटी खाना शुरू करता और आखिर मेज़ से उठने लगता तो वह सोने का सिक्का फिर जेब में डाल लेता। बरसों बाद एक बैरे ने उससे *यह भेद पूछने की जुरअत की।* उसने सोचा था कि यह कोई शॉपेनहावर की खानदानी रस्म होगी। पर शॉपेनहावर ने उसे अपनी एक अजीब हसरत बताई— मैंने आज तक कभी दान नहीं किया, पर यह सोने का सिक्का मैं रोज़ इस आस से जेब में से निकालता हूं कि मैं उस पहली घड़ी यह सिक्का दान करूंगा

जिस दिन मै किसी अंग्रेज को घोडों, औरतो, और कुत्तो के सिवाय किसी चीज़ के बारे मे बात करते सुनूगा…"

शॉपेनहावर होने का कोई दावा नही—यह सिर्फ आस-पास दूर-दूर तक फैले हुए 'डिके' की बात है। 'मॉरेलिटी' के सीमित अर्थों, और सिकुडे हुए घेरो की बात है। और उस दृष्टिकोण की बात, जो बहुसख्यको की आदतो मे शुमार हो तो स्वीकृत माना जाता है, पर जो गिने-चुने लोगो का चिन्तन हो तो अस्वीकृत।

('डेमोक्रेसी' सिर्फ उन्नत और विचारशील लोगो को मुआफिक आती है, पर मानसिक और आर्थिक तौर पर पिछड़े हुए लोगो को यह नसीब नही हो सकती। मूर्ख बहुसख्यक के मूर्ख फैसले वक्त की लगाम सम्भालते है—और ज़िन्दगी की विशाल सीमाएं उनके खुरो के नीचे कुचली जाती है। ये लोग 'आपरैस्ड' हो तो एक रेवड की तरह हाके जाते है, 'आपरेसर' हो तो एक लाठी की शक्ल में हाकते है। हालते दोनो ही भयानक है।)

नीत्शे ने सीमित अर्थों वाले इन्सान से, विशाल अर्थों वाले इन्सान को अलग करने के लिए 'सुपरमैन' शब्द गढा था, मैंने ऐसा कोई शब्द नही गढा, पर मेरे सबसे पहले नॉवेल के डाक्टर देव को कुछ ऐसे ही अर्थो मे लिया गया था। हमेशा सोचती रही हू, क्या यथार्थवाद के अर्थ इतने सिकुड गए है ? क्या बहुसख्यक का जाना-पहचाना जो कुछ है, सिर्फ वही यथार्थ है ? और क्या अल्पसख्यक कहे जाने वाले लोगो का अमल यथार्थ नही ?

पर सच की तलाश जिसकी प्यास हो, और सिर्फ 'सर्वाइवल' जिसकी तसल्ली न हो, यकीनन वह मॉरेलिटी के जाने-पहचाने अर्थो से टूट जाएगा।

डॉक्टर देव' की ममता पर, एक सवाल' की रत्ना पर 'बन्द दरवाज़ा' की बरमी पर 'एक थी अनीता' की अनीता पर 'धरती सागर सीपियां' की चेतना पर 'चक नं० छत्तीस' की मनवा पर और 'एरियल' की एकता पर इस जुरत का दाग है। ये दाग हैं क्योंकि मिस मवाइवल इन्हें क़बूल नहीं था।

अंधेर में भागे जाते झूठ के बजाय इन्होंने उजाले में सच का भोगना चाहा—चाहे इम्मॉरलिटी कहलवाने की क़ीमत दी। अंधेर की मॉरलिटी से उजाले की इम्मॉरेलिटी इनका चुनाव था।

'सुपर' जैसा कोई शब्द मैं इन पात्रों के साथ जोड़ना नहीं चाहती—इनका वजूद और उसका इज़हार सिर्फ़ एक लेखक के तौर पर जेब में डाले हुए सोचों के सिक्कों को खर्चने का यत्न है—इस ख्याल से कि अगर बहुत नहीं, तो शायद कुछ लोग, घोड़ों, औरतों और कुत्तों के सिवाय किसी और चीज़ की बात भी सुनना चाहेंगे (पश्चिमी स्तर के मुकाबले में जो पूर्वी स्तर के अनुसार कहना चाहें तो औरत, पैसा और परलोक कहा जा सकता है।)

मैंने अपने नॉवेलों में जिस औरत की बात कही है, वह सिर्फ़ 'सेक्स चिह्न' के अर्थों से टूटकर चलती है इसलिए वह अलग है। और इसलिए चाहे वह 'एरियल' की एकता (एक औरत) के मुंह से हो या 'जला-वतन' के मलिक (एक मर्द) के मुंह से—वह इंसान की बात है। एकता का दुखांत है कि उसके साबुत अस्तित्व के लिए, इंसान को सिर्फ़ टुकड़ों में क़बूलने वाले समाज की व्यवस्था में कोई जगह नहीं। और मलिक का दुखांत है कि उसकी उम्र से बड़े उसके मानसिक स्तर के वास्ते, कुछ लकीरों में लिपटे हुए समाज के ढांचे में उसकी कोई पूर्ति नहीं।

सच्चाई का जिज्ञासु मर्द भी हो सकता है और औरत भी। सिर्फ़ सच की परिभाषा अपने अपने मानसिक विकास के अनुसार होती है

इस नये नॉवेल का नायक एक मर्द है—कोई बीस बरसो की उम्र का, जवानी की पहली सीढी पर खडे होकर अपने वजूद को एक बेबसी से देखता, अपने माहौल को घूरता, और उसका कारण बने लोगो से क्रुद्ध। अपने क्रोध को वह आग की तरह जलाता है और उसके अगारो से खेलता, अपने हाथ पर भी छाले डलवाता है और अगर बस चले तो उसकी चिन्गारी उनकी झोली मे भी फेकता है जिनका अस्तित्व उसके अस्तित्व से सम्बन्धित है। यह सच्चाई को उसी एक कोण से देखने का प्रतिक्रम है, जिस कोण से देखने की आदत उसे उस के जन्म से मिली है—और जिस कोण से यह अक्सर देखी जाती है।

'ग्रोथ' इन्सान को एक कोण पर नही खडा होने देती। यह नायक 'ग्रोथ' का चिह्न है, इसलिए जब वक्त आता है, वह किसी और कोण पर खडा होकर सच्चाई को देखने से इन्कार नही करता। न उसको समझने से इन्कार करता है।

ज़िन्दगी अपने जाने-पहचाने अर्थों में जिस दायरे का नाम है उसको एक नज़्म में मैंने कुछ इस तरह कहा था .

छे कदम पूरे ते इक अधा
जेल दी इक कोठड़ी
कि बन्दा बैठ उठ सके
ते निसल वी हो लवे।
'रब' दी इक बही रोटी
'सबर' दा बकल सलूणा
चाहवे ताँ रजपुज के
उह दोवे डग खा लवे
ते जेल दे हाते दी गुठ्ठे

इक छप्पड़ ज्ञान दा
कि बन्दा हथ मुह धोवे
(ते कुज मच्छर नतार के)
आह बुक भर के पी लवे'

पर ज्ञान का खड़े पानी का जोहड़ बनाना ज्ञान की हतक है और उसके बासीपन को चुल्लू भर पीकर एक तृप्ति हासिल करना इन्सान की हतक। और कुछ लोग ऐसे होते है—जो यह हतक नही कर सकते

इन्सान के ऊंचे मानसिक स्तर की सम्भावना को अगर एक पंक्ति में कहना हो तो कुछ ऐसे कह सकती हूं—इन्सान हर खाई के ऊपर आप ही एक पुल बन सकता है आप ही उस पुल पर से गुजरने वाला और आप ही अपने से आगे पहुंचने वाला।

---

१ छह कदम पूरे और एक आधा
जेल की एक कोठरी
कि आत्मा बैठ-उठ सके
और निवृत्त भी हो ले,
प्रभु का एक आधा टांगे
सब्र' का सलोना वक्कल
वह चाहे तो इसे ही
दोनों वक्त खा ले
और नल्के के अहाते के पास
ज्ञान का एक जोहड़
कि आत्मा हाथ मुंह धोये
(उसके मच्छर निथार कर)
और घूंट भर पी भी ले

इस नॉवेल के नायक को मैं उसकी जन्म-कहानी से लेकर जानती ··उस दिन से जिस दिन उसको साधुओ के किसी डेरे में चढाया गया ा—यह वहुत वरसो की वात है। अव देखे हुए वरसो गुजर गए, पर व भी याद करू तो वड़े तराशे हुए नक्शो वाला उसका सावला मुह, उसकी उदासी समेत. आंखो के आगे आ जाता है। उसके वचपन का, उसका वार-वार कुछ सोचता हुआ मुह मुझे याद है, पर नही जानती कि उसने अपनी भरी जवानी मे ज़िन्दगी को कितना हसकर कवूल किया, कितना रोकर। मेरे नॉवेल के पन्नो मे चलता हुआ वह आखिर मे जिस अवस्था को पहुचता है, वह मेरी कल्पना है।

रवायती मय्यार, खुने आसमानो की सच्चाई नही होते, यह 'फाल-सरूफ' की एक सिकुड़ी हुई दानाई होते हैं। 'फालसरूफ' में कोई चाहे तो चाद-सितारे भी जड़ सकता है पर चाद-सितारो की लौ नही जड़ सकता···

इस नॉवेल के नायक को मैंने इसीलिए यात्री कहा है क्योकि सिर को छूती छत को तोड़कर वह चाद-सितारो की लौ की यात्रा आरम्भ करता है। अचेरे से पैदा हुई एक तीखी नफरत मे से उसकी यह यात्रा शुरू होती है—यही नफरत उसका हथियार है, जिसके साथ वह सिर के ऊपर तनी हुई छत को तोडने का यत्न करता है···

छत को तोड़ना, या मीलो लम्बी एक गुफा को लाघना एक ही अर्थों में है—

सिर्फ एक पक्ति में कहना हो तो कह सकती हू कि यह चाद-सितारो की लौ के आशिको के लिए, चाद-सितारो की लौ के एक आशिक की कहानी है। अपने से आगे अपने तक पहुंचने की यात्रा।

पांच बरस लम्बी सड़क

यह किसी एक सड़क की बात नही। बहुत सारी सड़को की है। इसलिए यह सिर्फ एक सड़क पर चलते हुए पात्रो की बात नही, अलग-अलग सड़क पर चलते अलग-अलग पात्रो की बात है। किसी पात्र का कोई नाम नही, पर हर सड़क का नाम है—पांच बरस लम्बी सड़क। पाच बरसो के अरसे को नियत कर लेना, सिर्फ एक 'सरवे' की खातिरहै।

धरती की मिट्टी सब पात्रो के पैरो के साथ लगी हुई हैं—उनके पैरो के साथ भी जिनकी कोमल छाती मे कुछ सपने पख खोल रहे हैं। और उनके पैरों के साथ भी, जिनकी छाती मे उनके सपने सिर्फ सास घोटकर बैठे हुए है। और उनके पैरो के साथ भी जिनका छाती मे पड़े सपनो की जून बदल गई है—और वे सपने किसी पंछी की तरह चहकने की बजाय सिर्फ कुत्ते की तरह भोंकते हैं···

आज तक मैंने जितने भी नॉवेल लिखे है, वे किसी एक राह की, और उस राह पर चलते हुए कुछ पात्रो की बात करते आए हैं। यह एक लेखक के तौर पर, एक चौराहे मे खडे होकर, अलग-अलग राहो को देखने का, और उनपर चलते अलग-अलग राहियो को जानने का एक

तजुरबा है।

एक सड़क के राही दूसरी सड़क के राहियों को नहीं जानते। सब एक दूसरे से अपरिचित हैं। इसलिए एक सड़क की कहानी अगर एक काड है तो दूसरी सड़क की कहानी उसका दूसरा काड नहीं। न तीसरी सड़क की कहानी उसका तीसरा काड है। और इसलिए यह एक नावल नहीं। पर जो इसके पाठक इसको एक चौराहा मान लें और हर सड़क पर बीतती कहानी को जिन्दगी के तजुरबे का एक अंग समझ लें तो सारे मरव' की एक अपनी आकृति बनती है। इस आकृति को, वे चाहें तो नॉवेल भी कह सकते हैं।

पर यह सब कुछ नॉवेल के पहचाने हुए अर्थों में नहीं।

अर्थ हैं पर पहचाने हुए नहीं। उनकी पहचान के लिए एक शब्द जो सबसे ज्यादा मदद दे सकता है वह एबसर्ड है। और एक अनुमान भी मदद दे सकता है कि सड़कें, जो बिल्कुल अलग अलग और विपरीत रास्तों पर जाती दिखती हैं क्या पता आगे जाकर एक दूसरी में मिल गई हों और जो पात्र एक सड़क पर जाते दिखते हैं वही भूल भटक दूसरी सड़क पर पहुंच गए हों। या एक के हालात अगर दूसरे की तरह होते तो वह, वही होता जो आज दूसरा है मैं यह नहीं कहती कि यह ऐसा हुआ है सिर्फ यह कि ऐसा भी हो सकता है। इसलिए मैंने कहा था किसी पात्र का कोई नाम नहीं दिया, यह या 'वह' कहकर हो, और 'मर्द' या औरत कहकर हालात बताई है।

बात है पर स्ट्रेंज और एबसर्ड।

पांच बरस लम्बी सड़क

नशा सगीत का भी था, कॉकटेल का भी, और शायद बढती रात का उनीदापन भी था, नाचते हुए जोडो की आखे आधी सोई हुई-सी थीं।

सिर्फ बिजली के दूधिया बल्ब पूरी तरह जाग रहे थे।

अचानक अधेरे ने अपना हाथ आगे किया, और रोशनी की आखो पर अपनी हथेली रख दी।

अधेरे के होठो मे से धीमी-सी आवाज़ आई—हैप्पी न्यू ईयर।

जवाब मे सबके होठ हिले—और जो भी कोई नजदीक था, उसके गाल या गर्दन के मास से छूकर, होठो की तरह ही गीले हो गए।

सिर्फ एक लडकी के होठ और सूखे-से हो गए, और उसके जो भी नजदीक था, उसके गाल या गर्दन को छूने की जगह, अपने होठो पर अपनी जीभ फेरी।

उसकी आखो ने, अधेरे की तरह फैलकर, अधेरे को टटोला। और फिर अपने गले में पडे हुए सिल्क की स्कार्फ की तरह, वह कमरे मे से सरककर एक कोने मे चली गई।

उसने सचमुच अधेरे को टटोलकर उसे ढूढ लिया था। वह कोने

में खड़ा था।

—वाट यू गिव मी ए न्यू ईयर किस ?'—लड़की ने कहा और उसे लगा कि उसके मुह का रग शायद बहुत लाल हो गया था।

पर उसे तसल्ली थी कि इस अधेरे म उसके मुह का रग किसी को नही दिख सकता। कमरा उसी तरह अधेरा था पर उस लड़की को लगा, कमरे के इस कोने में हल्की सी रोशनी थी।

शायद इसलिए कि कोने म खड़े उस लड़के की कमीज़ बहुत सफेद थी।

कमीज़ के सफेद रग मे हल्की-सी हरकत हुई। और उस लड़के ने अपनी बाह लड़की के गिर्द लपेट दी।

लड़की को लगा—उसके गिर्द हल्की-सी रोशनी की एक धारी लिपट गई थी।

लड़की ने सफेद कमीज़ की धुधली सी रोशनी को अपने सिर से छुआ। और फिर उसे लगा उसके सिर क ठडे बालो में एक गर्म सी सास मिल रही थी।

हैप्पी न्यू ईयर अचानक बिजली के बल्ब खिलखिलाकर बोल पड़े।

सिर्फ लड़की क घने बालों मे डूबे हुए उस लड़के के होठ चुप थे।

लड़की ने अपने गले म पड़ा हुआ सिल्क का स्कार्फ अपने गले से उतारा, और सिर पर बाध लिया।

शायद वह सोच रही थी कि अपने बालो म पड़ हुए उस लड़के के सासों को वह अच्छी तरह ढाप ले।

कमरे म खड़े हुए जितने भी और थे वह खाने की मेज़ की तरफ बढ़े।

—तुम्हे भूख लगी है ? —लडकी ने मेज से आती हुई प्लेटो की खडखडाहट मे उस लडके से पूछा।

—जो तुम्हे लगी हो तो।

—एक की भूख का दूसरे की भूख से क्या वास्ता ? —लडकी हस-सी पडी।

लडके ने कहा कुछ नही, सिर्फ हस दिया।

—चलो, वाहर लान में चलें।

वाहर लान मे अधेरा था। पर वैसा अधेरा नही जो जलती विज-लियो को अचानक बन्द करने से हो जाता है।

—तुम्हे पता है, मैं वाहर अधेरे मे क्यो आई हू ? —लडकी ने एक पेड के तने के पास खडे होकर कहा।

लडके ने कहा कुछ नही, सिर्फ उसकी तरफ देखा।

वह पेड के तने के पास खडी हुई एक पतली-सी वेल सरीखी लग रही थी।

—उस वक्त जव उन्होने विजलिया वुझाईं, मुझे लगा नये वरस के आगमन मे उन्होने पुराने वरस को किसी अधेरे में फेक देना चाहा था। पुराने वरस को अधेरे मे फेंकने की क्या जरूरत थी ? मै वाहर अधेरे में उनके फेके हुए वरस को ढूढने आई हू।

—तुम्हे यह वीता हुआ वरस वहुत अच्छा लगता था ?— लडका हस पडा।

—अपने वीतने से दो घण्टे पहले वह मुझे वहुत अच्छा लगने लगा था। —लडकी ने वताया।

लडके को पूछने की जरूरत नही थी। वे सारे कालेज के साथी,

पिछले दो घण्टा से, इस कमरे में बरस की आखिरी शाम मना रहे थे। और लडकी को उस बरस का पिछले दो घण्टा से अच्छा लगना इसी कमरे में हुआ था।

—जो तुम चाहो, तो नया बरस भी तुम्हें अच्छा लग सकता है। पुराने बरस की तरह।—लडके ने सिर्फ इतना कहा।

—अच्छा लगने से मेरा मतलब है वह मेरा था। मेरे पास था।

—सिर्फ दो घण्टा से।

—चाहे सिर्फ दो घण्टा से।

—और नया बरस ?

—यह पता नहीं कितने मिनट मेरा रहेगा। अभी मुझे वापस घर जाना पड़ेगा तो फिर यह मेरा नहीं रहेगा।

लडकी ने एक गहरा सास लिया और फिर कहा—जब बिजलियां जल रही थीं, तुमने उसे देखा था ?

—किसे ?—लडके ने जेब में हाथ डालकर सिगरेट की डिबिया निकाली और एक सिगरेट जलाकर पीता हुआ कहने लगा—तुम्हारे दोस्त को ?

—वह मेरा दोस्त नहीं।

—पर मैंने हमेशा तुम्हें उसके साथ देखा है।

—मैंने भी हमेशा अपने आपको उसके साथ देखा है।—लडकी हस पडी और कहने लगी—पर आज मैं अपने आपको उसके साथ देख देखकर थक गई हू।

—मेरा ख्याल था उससे तुम्हारा ब्याह होगा।

—मेरा भी ख्याल है उसके साथ मेरा ब्याह होगा।

लडके के पास हसने के सिवा चारा नहीं था। इसलिए वह हस पडा।

लडकी को गुस्से की एक झुंझलाहट-सी हुई, और वह कहने लगी—

यह हसने वाली वात है ?

और फिर लडकी ने उस लडके के हाथ से सिगरेट पकड ली, और उसे पीती हुई कहने लगी—आज मुझे सारे गुनाह करने है। आज मैने काकटेल भी पहली वार पी है, सिगरेट भी पहली वार पी रही हू, और जीने की कोशिश भी पहली वार कर रही हू…

यह भर जाडे की रात थी। आधी रात। पर लडकी को अपना जिस्म तपता-सा लगा—खासकर अपना सिर। उसने सिर पर वाधा हुआ सिल्क का स्कार्फ खोल दिया। उसके सिर के वाल वहुत छोटे थे। गर्दन से भी ऊपर तक कटे हुए। उसने जव स्कार्फ खोल दिया, वालो ने उसके माथे पर एक झुरमुट-सा डाल दिया।

लडके को लगा, पेड के तने से लगकर खडी हुई उस वेल सरीखी लड़की मे अचानक वहुत सारे फूल लग गए थे।

वालो के कुडल फूलो की तरह हिल रहे थे। लड़के ने धीरे से फूलो को सूघा।

लडकी का सिर आगे झुका। लड़के को लगा—फूलो का एक गुच्छा उसके कन्धो को छू रहा था।

लडके के होठो का सास, ओस की तरह फूलो पर पडता रहा।

—तुम्हे वह कैसा लगता है ?—लडकी ने पूछा। और लडकी को खुद ही लगा कि जैसे उसकी आवाज़ सिसक गई थी।

—कौन ?—और फिर लडके ने खुद ही कहा—वह तुम्हारा दोस्त ?

—मैने अभी कहा था, वह मेरा दोस्त नही।

लडके का उसकी कही हुई वात याद थी, फिर भी उसकी वात करने के लिए उसे एक यही लफ्ज सूझा था। कहने लगा—मै उसे वहुत नही

जानता, पर अच्छा ही होगा, वह हर साल फस्ट आता है।

लडकी के जिस्म की बेल सरीखी नर्माई कस सी गई। और वह कहने लगी—सब यही कहते है। मेरे मा-बाप भी यही कहते हैं। अच्छे होने की निशानिया होती है हर साल फस्ट आना, एक अमीर बाप का बेटा होना, और फिर आई० सी० एस० बनना

लडका हस पडा। सिफ एक बार उसका जो चाहा कि वह लडकी के इस रोष मे बल से खाते हुए होठो को कसकर चूम ले। पर उसने हसकर अपने हाठो को रोक लिया।

सिफ उसका सास लडकी के हाठो को धीमे से छूकर पेड के तने के पास गिर गया। और लडकी को लगा—शायद उसका सास भी बीते हुए बरस की तरह था जो अधेरे मे गिर गया था।

—तुम फस्ट क्यो नही आते ? लडकी का सवाल बडा अचानक था। जसे अधेरे मे गिरे हुए उस लडके के सास को और बीते हुए बरस को वह अधेरे म हाथ मारकर ढूढ रही हो।

—तुम्हारा मतलब है मैं अच्छा लडका क्या नही बनता ?

—तुम्हें पता है मेरे मा-बाप तुम्हारे बारे मे क्या कहते हैं ?

—मेरा ख्याल है वह मुझे जानते नही। इसलिए जान बिना कुछ नही कह सकते।

—वह तुम्ह बहुत बुरा लडका समझते हैं।

—यह उनकी समझ के मुताबिक है।

—तुम्हारा मतलब है उनकी समझ उनकी समझ को तुम क्या कहना चाहोगे ?

—सिफ इम्मच्योर[१]।

लडका खिलखिलाकर हस पडी। कहने लगी—अगर कोई बीस

१ भावनाओं की दृष्टि स अपरिपक्व

वाईस वरस के एक लडके को एक चालीस वरस के आदमी के वारे मे या औरत के वारे मे यह कहते सुने तो ?

—किसी को जाने विना उसके वारे मे कुछ सोच लेना इम्मेच्योरिटी होती है, चाहे सोचने वाले की उम्र कितनी ही हो।

—पर मैं पूछ रही थी कि तुम फर्स्ट क्यो नही आते ?

—क्योकि मुझे कभी नौकरी नही करनी है। मुझे कभी सिविल सर्वेंट नही वनना।

लडकी फिर खिलखिलाकर हस पडी। कहने लगी—हिटलर की तरह ? हिटलर का भी जिन्दगी मे सवसे पहला फैसला यह था कि वह कभी सिविल सर्वेंट नही वनेगा।

—तुम इस वात से मुझे हिटलर के साथ मिला सकती हो। और शायद किसी बात से नही।

—दज स्पोक ज़रथुस्त्र—लडकी ने कहा और हस पडी।

लडके को कालेज मे 'लिटिल नीत्शे' कहते हुए, लडकी ने कइयो को सुना था। और नीत्शे के फिलासफर पात्र ज़रथुस्त्र का नाम भी उसके साथ जोडकर, उसकी कही वात को दोहराते, कहते थे—दज स्पोक जरथुस्त्र· ·

इस वक्त लड़की ने यह शब्द सिर्फ एक मुहावरे की तरह दोहराए थे।

—मैं नीत्शे वन सकता हू, चाहे अन्त में पागल होना पडे। पर हिटलर नही वन सकता।—लडका हस पडा।

—हिटलर भी, शायद डिक्टेटर वाला हिटलर नही वनना चाहता था। वह एक आर्टिस्ट वनना चाहता था। पर उसे आर्ट स्कूल में दाखिला नही मिला था।

लडकी के गले में पडा हुआ सिल्की स्कार्फ उसके गले से फिसलकर,

परा म गिर पडा था । इतना लडकी के परा म नहीं—जितना लडके के पैरा म ।

लडके न परा म से स्काफ उठाया । जिस वक्त वह स्काफ का लडकी का गदन म लपेटने लगा लडकी न उसका हाथ पीछे की तरफ माडकर, स्काफ को लडके का गदन म लपट दिया । फिर हस पडा—तुम्ह पता है, हिटलर को प्राट स्कूल मे दाखिला क्यो नही मिला था ?

—क्यों ?

—प्राट स्कूल का प्रिंसिपल जरूर मरे बाप का तरह होगा । इम्म स्यार ।

वह हसे जा रही थी । वह एक बेल की तरह नाजुक थी पर उसकी बात सुनकर लडके को लगा—वह परा-पर ऊची होती सार पड पर फल रही थी ।

स्काफ अभी लडके क गल म था । लडके क खून में कुछ उफान-सा आया । उसके जी म आया कि वह इस रेशमी स्काफ का तरह इस रेशमा स्काफ सरीखी लडकी का कसकर अपना छाती स लगा ल ।

उसने दो तीन सिर्फे स सास लिए—जसे अपने गम खून का वह फूकें मारकर ठडा कर रहा हो ।

—क्या सोच रह हो ?

लडका कुछ नही साच रहा था । सिफ अपने खून को कुछ ठडा कर रहा था । पर लडकी के पूछने पर उसे एक ख्याल आया, और उसन कहा—सोच रहा था अगर इसी तरह स्काफ को अपनी गदन म डाले मैं अदर कमरे म चला जाऊ ?

—मुझे कोई एतराज नहीं ।

—तुम्हारा बाप देख लेगा ।

—वह अव भी कही न कही खडा होकर जरूर देख रहा होगा। उसने तुम्हे उस वक्त भी देखा था, जिस वक्त वारह वजे के अंधेरे के वाद कमरे की विजलिया फिर से जली थीं। और उस वक्त भी देखा था जव उससे एक घण्टा पहले मैंने तुम्हारे साथ डास किया था।

—उसने तुमसे कुछ कहा था ?

—ही हेट्स यू।[1]

—पर मुझे उससे कोई नफरत नही।

—वह अच्छा लडका है इसलिए नफरत का हक सिर्फ उसे है।

रात और ठंडी हो गई थी। लडकी के गले मे पडे हुए स्वेटर के ऊपर के वटन खुले थे। लडके ने उसके वटन लगा दिए।

लडकी की सास फिर गर्म-सी हो गई। और उसका जी चाहा कि वह स्वेटर के वटन फिर खोल दे। इसलिए नही कि लडके को फिर एक वार वटन लगाने पडे, सिर्फ इसलिए कि उसकी छाती का साम सचमुच वहुत गर्म हो गया थी।

—यह क्या है ? लडकी ने खिंची-सी सास लेकर कहा।

—क्या ?

—समथिंग वैरी एलाइव।[2] तुम्हारे साथ डास करते हुए भी मुझे लगा था। फिर उस वक्त भी जिस वक्त कमरे के अंधेरे मे तुम्हे खोजती मैं तुम्हारे पास आई थी। और अव फिर—जिस वक्त तुमने मेरे स्वेटर के वटन वन्द किए है ··

—इट इज मी[3]···

---

१ तुमसे नफरत करता है।

२. कुछ वहुत जानदार।

३. यह मैं हू ·

—यू आर ए स्ट्रेंज परसन[1]
—व्हाय ?[2]
—बिकाज यू आर सो एलाइव   व्हाय आर यू सो एलाइव ?[3]
लडकी ने एक बल सा खाकर अपना सिर उस लडके के कन्धे पर रख लिया। दोनो म पेडा की टहनियो की तरह कुछ उलझ सा गया।

लडकी का सास सुबकियो जसा हो गया था। उसकी आवाज उसके सासा म और सुबकियो म फसी हुई थी—मुझे लगता था जसे हर किसी मे कुछ मर गया होता है ऐवरी बाडी इज डड ऐट लीस्ट फिफ्टी परसेंट सिक्स्टी परसेंट इज डड   ए व री बा डी ऐंड ही   इज द डडेस्ट आफ आल   ४
इस ही के बारे मे पूछने की लडके को कुछ जरूरत नही थी।
जिस दोस्त के घर यह पार्टी थी यह लान उस घर के पिछली तरफ था। लडके को लगा—कि घर की अगली तरफ कुछ कारा और स्कूटरा की आवाज़ आ रही थी। पार्टी शायद खत्म हो गई थी। उसने लडकी का वक्त का ध्यान दिलाया।
—मैंने तुमसे कहा था   मैं अभी घर चली जाऊगी और फिर यह नया बरस मेरा नही रहेगा।
— पर
— पर से कुछ नहीं बनेगा। मेरे घर पहुचने से पहले ही शायद यह

---

१ तुम अद्‌भुत व्यक्ति हो।
२ क्यों ?
३ क्योंकि तुम इतने जानदार हो   क्यों हो तुम इतने जानदार ?
४ हर कोई मर चुका है कम से कम पचास या साठ फीसदी मर चुका है ह र को ई और वह इन सबसे ज्यादा मृत है।

बात वहा पहुंच गई होगी। या सवेरे पहुंच जाएगी।

—तुम्हारा ख्याल है वह तुम्हे कुछ कहने की जगह···

—वह मुझे कुछ नही कहेगा। आई टोल्ड यू ही इज़ द डेडेस्ट आफ आल। पर ऐसे डेड लोगो मे चुगलिया खाने की हिम्मत सबसे ज्यादा होती है।

—अगर मुझे इसका पता होता···

—फिर तुम मुझे बाहर लान मे लेकर न आते ? और हम अन्दर आराम से एक दूसरे को कहते 'हैप्पी न्यू इयर', 'सेम टू यू'—यह हर एक को कहे जाते, और प्लेटो मे से चावल खाए जाते, और फिर उसपर आराम से पुडिंग खाकर घर चले जाते।

लडके ने लडकी के जलते होठो को अपने होठो मे ले-सा लिया। और लडकी के होठ ठडे अधेरे की तरह शान्त हो गए।

और फिर लड़के ने अपनी गर्दन से स्कार्फ उतारकर लडकी के सिर पर बाध दिया।

पूरे बाईस दिन गुजर गए थे। छुट्टियां भी खत्म हो गई थी। पर लडकी कालेज नही आई थी।

चलती हवा को भी कान लगाने से, कोई न कोई सुराग मिल जाता है पर लडके को कोई खबर नही मिली थी।

तेईसवें दिन एक खत आया। खत को खोलते हुए लडके के पपोटे काप-से गए। उसी का खत था, लिखा था—गुनाहो की सूची शायद अभी बहुत लम्बी नहीं हुई। सारा घर मेरे लिए एक 'प्रिज़न' की तरह है, और आज यह खत इस 'प्रिज़न' में से स्मगल करवा रही हू। स्मग-लिंग का गुनाह अभी बाकी रहता था। इसमें सिर्फ यह पता देना है कि

कल दोपहर को तीन बजे स्टेट लाइब्रेरी म जरूर आना। सिर्फ एक दिन के लिए लाइब्रेरी म जान की इजाजत मिली है।

खत दूसरे दिन मिला था। यही वह वक्त था जो लडके ने घडी की तरफ देखा घडी न आने वाली घडी की तरफ

लाइब्रेरी म हजारो किताबें थी। इन किताबो ने दुनिया क पता नही कितने हजार लोगो को अपने पृष्ठो म पनाह दे रखी थी—पर इन पृष्ठो के बाहर भी आज कोई दो जने थे, जिन्ह इन्होंने पनाह दी।

यह जिन्दगी म पहली बार था, जब लडके का रोने को जी चाहा। लडकी का मुह पिघलकर सिर्फ उसकी दो आखें बन गया था।

—मैंने ठीक कहा था मेरे घर पहुचने से पहले उन तक यह बात पहुच चुकी थी। दट ईडियट रग माई फादर।[1]

—पर फादर

—मैंने स्टालिन को नही देखा सिर्फ उसके वक्त जो कुछ हुआ था वह पढा है। पर उस दिन मैंने देखा भी। सचमुच उस दिन मेरे फादर की शक्ल भी स्टालिन की तरह हो गई थी।

लडकी हस-सी पडी। लडके ने उसके बाईस दिनो की भयानकता को इस तेईसवें दिन कुछ आसान सा करने के लिए उसकी हसी की रौ सभाल ली। कहने लगा—तो आज से मैं तुम्हे मिस स्टालिन कह सकता हू।

इस बार लडकी की हसी बडी स्वाभाविक थी। कहने लगी—इस नाम का मुझे ख्याल नही आया पर उस रात मैंने जरूर सोचा था कि मैं

सामने मेज पर कुछ किताबें पडी था। एक किताब की जिल्द का

१ उस बेवकूफ ने मेरे पिता जी को फोन कर दिया।

पीला रग लडके के मुह पर फिर गया।

—तुम घबराओ नही। मैंने मरने के बारे मे नही सोचा था। सिर्फ उस घर को छोडने के बारे मे सोचा था।

इस बार मेज़ पर पड़ी हुई एक और किताब का गहरा-सा रंग लडके के मुह पर छा गया।

—वह अब मुझे इस कालेज मे नही भेजेगे। पर पढाएगे ज़रूर। क्योकि उनके ढूढे हुए लड़के को आई० सी० एस० बनना है। और आई० सी० एस० की बीबी का पढना जरूरी है। वह मुझे कलकत्ता भेज रहे है, होस्टल में पाच बरसो के लिए।

—यह तुम्हारे कालेज का पहला वरस है ?

—पहला वरस। इसीलिए तीन साल बी० ए० के और दो साल एम० ए० के। कुल पाच साल।

—यह सब तुम्हे कैसा लगता है ?

—टैररिज्म[1]।

लडका बोला नही।

—तुम चाहो तो मैं अभी, इसी घडी सब कुछ छोड़ सकती हू।

लडका कुछ देर तक उसकी तरफ देखता रहा। वह घबराई हुई नही थी। सिर्फ उसकी अडोलता कुछ सोच रही-सी लगती थी।

—गुनाहो की सूची शायद अभी बहुत लम्बी नही हुई।—लड़के ने लड़की के शब्दो को दुहराया।

—भागने का गुनाह अभी बाकी है।—लडकी हस पडी।

—यह गुनाह छोटा है। मेरा ख्याल है, इससे बड़ा गुनाह करना चाहिए।

—यह छोटा है ?

१. अत्याचार

—छोटा इसलिए कि वक्त बीतने पर तुम्हें पछतावा भी हो सकता है।

—तुम्हारे होते हुए मैं पछताऊंगी नही।

—अभी तुम बहुत छोटी हो।

—बालिग हू, अठारह साल की।

—कच्चे रेशम सी।

लड़की एलास्टिक की जीन, और गले म रा सिल्क का ब्लाउज पहने थी। कहने लगी—कच्चे रेशम की मैं नही, सिर्फ मेरा ब्लाउज है।

—तुम नही सिर्फ तुम्हारा ब्लाउज और तुम्हारी उम्र।—लड़के ने एक गहरा सास लिया। फिर कहा—मैंने तुम्हें बताया था कि मैं सिविल सर्वेंट कभी नही बनूगा। मैं सिर्फ लिखना चाहता हू। बन सका तो राइटर बनूगा नही तो जर्नलिस्ट। तुम बड़ी अमीरी मे पली लड़की हो

—अमीरी म, पर बड़ी सस्ती म।—लड़की ने टोककर कहा।

लड़का मुस्करा दिया। बोला कुछ नहा। पर उसकी चुप जसे कह रही थी—तुम्हे पता नही, गरीबी म भी एक अजीब सस्ती होती है।

—तुम क्या चाहोगे कि मैं उस आई० सी० एस० होने वाले

मैंने यह नहीं कहा।

—फिर ?

—सिर्फ यह, कि अपनी पढ़ाई के बरस पूरे कर लो।

—पर तुमने कहा था—गुनाहो की सूची अभी बहुत लम्बी नहीं हुई

—इस हालत म सब्र भी एक गुनाह है।

—इसी को तुमने एक बहुत बड़ा गुनाह कहा था ?

—इसी को।

—फिर इसके बाद ?

—तब तुम जो भी कहोगी, वह ठीक होगा।

—मेरा वाप स्टालिन है, पांच वरसो वाद भी उसका फैसला यही होगा।

—फिर हम छोटा-सा गुनाह कर लेगे।

—भागने का ?

—हा।

लडके ने धीमे से अपनी हथेली लडकी की हथेली पर रख दी।

वक्त की सडक वहुत लम्बी लग रही थी। इस सडक पर धूप भी वहुत हो सकती थी, ठड भी वहुत, और वारिश तथा अधेरा भी। पर लडकी को लगा—वह इन हथेलियो की छाव मे चल सकती थी···

तो भी एक वार उसने तरसकर लड़के की तरफ देखा। और फिर कहा—तुम्हे वह नये वरस की रात याद है? जव उन्होने विजलिया वुझाके पुराने वरस को अधेरे मे फेका था। क्या एक दिन विजलिया वुझाके यह पाच वरम एकवारगी अधेरे में नही फेंके जा सकते ?

लडके ने उसकी हथेली कसकर भीच दी और कहा—नही एकवारगी नही, सिर्फ एक-एक करके। और वह भी वरस नही, रोज रात की विजली वुझाकर, एक-एक दिन को अधेरे मे फेंककर···

पाच बरस लम्बी सडक

सॅक मौसम का था मन का नही।

हवाई जहाज वक्त पर आया था पर नीचे एयरपोर्ट स अभी सिग-नल नही मिल रहा था। जहाज को दिल्ली पहुचने की खबर ग्कर भी, अभी दस मिनट और गुजारने थे इसलिए शहर के ऊपर उसको कुछ चक्कर लगाने थे।

उसने खिडकी म मे बाहर भाकते हुए शहर के मुडरे पहचाने, मुडेरे, किले खडहर, खेत

'क्या पहचान सिफ आखो की होती है? आखें इस पहचान को अपने से आगे कही नीचे तक क्या नही उतारती?'—उसे ख्याल आया। पर एक धुन जसी सोच की तरह नही ऐसे ही राह जाता ख्याल।

मुडेरे किले खडहर खेत उसने कई देशो के देखे थे। हर देश मे इन चीज़ों के यही नाम होते हैं चाहे हर देश म इन चीजो का अलग अलग इतिहास होता है। इनके रग इनके कद इनकी मुह-मुहार भी अलग अलग होती है—एक इसान से अलग दूसरे इन्सान की तरह। पर फिर भी इन्सान का नाम इसान ही रहता है। मुडेरा का नाम भी

मुडेरे ही रहता है, किले का नाम भी किला ही…

सिर्फ एक हल्का-सा फर्क था—हर देश मे इन चीजो को देखते वक्त एक ख्याल-सा रहता था कि वह इन्हे पहली बार देख रहा था। पर आज अपने देश मे इन्हे देखकर उसे लग रहा था कि वह इन्हे दूसरी बार देख रहा था और उसे ख्याल आया अगर वह फिर कुछ दिनो बाद परदेस गया तो वहा जाकर, उन्हे देखकर भी, इसी तरह लगेगा कि वह उनको दूसरी बार देख रहा है। बिल्कुल आज की तरह। यह देस और परदेस का फर्क नही था। यह सिर्फ पहली बार, और दूसरी बार देखने का फर्क था।

जहाज ने लैंड किया। एयरपोर्ट भी जाना-पहचाना-सा लगा, दूसरी बार देखने की तरह। इससे ज्यादा उसके मन मे कोई सेक नही था।

ओवर कोट उसके हाथ मे था। गले का स्वेटर भी उतारकर उसने कन्धे पर रख लिया।

सेक मौसम का था, मन का नही।

कस्टम में से गुजरते वक्त उसे एक फार्म भरना था कि पिछले नौ दिन वह कहा-कहा रहा था। पिछले नौ दिन वह सिर्फ जर्मनी मे रहा था। उसने फार्म भर दिया। और उसे ख्याल आया—अच्छा है, कस्टम वाले सिर्फ नौ दिनो का लेखा पूछते है, बीस-पच्चीस दिनो का नही। नही तो उसे सिलसिलेवार याद करना पड़ता कि कौन-सी तारीख वह किस देश मे रहा था। उसने वापस आते समय कोई एक महीना सिर्फ इसी तरह गुज़ारा था—कभी किसी देश का टिकट ले लेता था, कभी किसी देश का। अगर किसी देश का वीज़ा उसे नही मिलता था तो वह दूसरे देश चल पडता था…

पासपोर्ट की चेकिंग करते समय, और पासपोर्ट वापस करते हुए,

एक अफसर ने मुस्करा क कहा था— जनाब पाच बरस बाद देश आ रहे हैं।'

बिल्कुल उस तरह जिस तरह एयर होस्टेस ने राह म कई बार बताया था कि इस वक्त तक हम इतने हजार किलोमीटर तय कर चुके है। गिनती अजीब चीज हाती है चाहे मीलो की हो या बरसों की। उसे हसी सी आई।

जहाज म से उसके साथ उतर हुए लोगो को लेने आए हुए लोग— हाथ मिलाकर भी मिल रहे थे गले म बाहे डालकर भी मिल रहे थे। कइयो के गले म फूलो क हार भी थे। पसीने की और फूलो की गध म शायद एक तीसरी गध और भी होती है उसे ख्याल आया। पर तीसरी गध की बात उसे एक थीसिस जितनी बराबर लगी। वह अभी अभी एक परदेसी जबान सीखकर और उसके लिटरेचर पर थीसिस लिखके, एक डिग्री लेकर आया था। नये थीसिस की कोई बात वह अभी नहीं सोचना चाहता था। इसलिए सिर्फ पसीने और फूलो की गध सूघता हुआ वह एयरपोर्ट से बाहर आ गया।—

घर म सिर्फ मा थी।

जाते वक्त बाप भी था छोटा भाई भी, और एक लडका नहीं वह लडकी घर म नहीं थी वह सिर्फ उसी दिन उसके जाने वाले दिन आई थी। मा का सिर्फ एक ही कुछ घटो के लिए भ्रम हुआ था कि वह लडकी छोटा भाई ब्याह कराके अब दूर नौकरी पर रहता था, घर मे नहीं था। बाप अब इस दुनिया म कहा नहीं था। इसलिए घर में सिर्फ मा थी।

कई चीजें अन्दर स बाहर आती हैं, पर बाहर से वहीं रहती हैं। कई चीजें बाहर से अन्दर जाती हैं, पर अन्दर स वहीं रहती हैं।

उसका कमरा विल्कुल उसी तरह था—उसका पीला गलीचा, उसकी खिडकी के टसरी पर्दे, उसकी मेज पर पडा हुआ हरी धारियो का फूलदान, और दहलीजो मे पडा हुआ गहरा खाकी पायेदान। चादनी का पौधा भी उसकी खिडकी के आगे उसी तरह खिला हुआ था। पर पहले इस सब कुछ की गन्ध—दीवारो की ठडी गन्ध के समेत—उसके साथ लिपट-सी जाती थी। और अब उसे लगा कि वह उसके साथ लिपटने से सकुचाती, सिर्फ उसके पास से गुजरती थी और फिर परे हो जाती थी। पता नही उसके अन्दर कहा क्या बदल गया था।

मां कश्मीरी सिल्क की तरह नर्म होती थी और तनी-सी भी। पर उम्र ने उसे जैसे धो-सा दिया था। वह सारी की सारी सिकुड गई लगती थी। मा से मिलते वक्त, उसका हाथ मा के मुह पर ऐसे चला गया था, जैसे उसे हथेली से मास की सारी सिकुडने निकाल देनी हो। मा की आवाज भी वडी धीमी और क्षीण-सी हो गई लगती थी। शायद पहले उसकी आवाज का जोर उसके कद जितना नही, उसके मर्द के कद जितना था, और उसके विना अब वह नीचा हो गया था, मुश्किल से उसके अपने कद जितना। जव उसने वेटे का मुह देखा था, उसकी आखे उसी तरह सजग हो उठी थी जैसे हमेशा होती थी। उसकी छाती का सास उसी तरह उतावला हो गया था, जैसे हमेशा होता था। वह कही किसी जगह, विल्कुल वही थी, जो हमेशा थी। सिर्फ उसके वाहर वहुत कुछ वदल गया था।

"मुझे पता था, तू आज या कल किसी दिन भी अचानक आ जाएगा" मा ने कहा।

उसने अपने कमरे मे लगे हुए ताजे फूलो को देखा, और फिर मा की तरफ।

मा की आवाज़-सकुचा-सी गई—"यह तो मैं रोज़ ही रखती थी।"

"रोज़ ? कितने दिनों से ?" वह हंस पड़ा।

"रोज़" मा की आवाज़ उसके जिस्म की तरह और सिकुड़ गई, "जिस दिन से तू गया था।"

'पाच बरसों से ?" वह चौंक-सा गया।

मा मकुचाहट से बचने के लिए रसोई मे चली गई थी।

उसने जेब म से सिगरेट का पकट निकाला। लाइटर पर उगली रखी तो उसका हाथ ठिठक गया। उसने मा क सामने आज तक सिगरेट नहा पी थी।

मा ने शायद उसक हाथ मे पकड़ा हुआ सिगरेट का पकिट देख लिया था। वह धीरे से रसोई मे से बाहर आकर और बठक म से ऐश-ट्रे ला कर उसकी मेज पर रख गई।

उसे याद आया—छोटे होते हुए मा ने उसे एक बार चोरी से सिगरेट पीते देख लिया था और उसके हाथ म सिगरेट छीनकर खिड़की से बाहर फेंक दी था

मा शायद वही थी पर वक्त बदल गया था।

मा फिर रसोई म चली गई। वह चुपचाप सिगरट पीने लगा।

'मुझे पता था तू आज या कल किसी दिन भी आ जाएगा' उसे मा की अभी कही गई बात याद आई। और उसके साथ मिलती जुलती एक बात भी याद आई। 'मुझे पता लग जाएगा जिस दिन तुम्हे आना होगा, मैं खुद उस दिन तुम्हारे पास आ जाऊगी।"

बहुत देर हुई, जब वह परदेस जाने लगा था, उस एक लड़की ने यह बात कही थी।

उस लड़की से उसकी दोस्ती पुरानी नही थी वाकफियत पुरानी थी, दोस्ती नहा था। पर पाच बरसों क लिए परदेस जाने क वक्त जाने की खबर सुनकर, अचानक उस लड़की को उसक साथ मुहब्बत

हो गई थी——जैसे जहाज मे बैठे किसी मुसाफिर को, अगली बन्दरगाह पर उतर जाने वाले मुसाफिर से अचानक ऐसी तार जुडी-सी लगने लगती है, कि पलो में वह उसे वहुत कुछ दे देना, और उससे वहुत कुछ ले लेना चाहता है।

और ऐसे वक्त पर, बरसो मे गुजरने वाला, पलो मे गुजरता है।

उसने यह 'गुज़रना' देखा था। अपने साथ नही उस लडकी के साथ।

"तुम्हारा क्या ख्याल है, मैं जो कुछ जाते वक्त हू, वही आते वक्त होऊगा ?" उसने कहा था।

"मैं तुम्हारी बात नही कहती, मै अपनी बात कहती हू" लडकी ने जवाब दिया था।

"तुम यही होगी, यह तुम्हे किस तरह पता है ?"

"लडकियो को पता होता है।"

"तो लडकिया बावरी होती है।"

वह हस पडा था। लडकी रो पडी थी।

जाने मे वहुत थोडे दिन थे। पाच दिन और पाच राते लगाकर उस लडकी ने एक पूरी बाहो वाला स्वेटर बुना था। उसे पहनाया था और कहा था—"वस एक·· इकरार मागती हू, और कुछ नही। जिस दिन तुम वापस लौटो गले मे यही स्वेटर पहनकर आना।"

"तुम्हारा क्या ख्याल है, मैं वहा पाच बरस···" उसने जो कुछ लडकी को कहना चाहा था, लडकी ने समझ लिया था।

जवाब दिया था, "मैं तुमसे अनहोने इकरार नही मागती। सिर्फ यह चाहती हू कि वहा का वहा ही छोड आना।"

वह कितनी देर तक उस लड़की के मुह की तरफ देखता रहा था।

और फिर उसको यह सब कुछ एक अनादि औरत का अनादि छल

लगा था। वह बेवफाई की छूट दे रही थी पर उसपर वफा का भार लादकर।

वह रही थी "मैं तुम्हे खत लिखने के लिए भी नहीं कहूगा। सिर्फ उस दिन तुम्हारे पास आऊगी, जिस दिन वापस आओगे।"

"तुम्हें किस तरह पता लगेगा मैं किस दिन वापस आऊगा?" लडकी का टाल करने के लिए उसने कहा था।

और उसने जवाब दिया था—'मुझे पता लग जाएगा जिस दिन तुम्हे आना होगा।

उस दिन वह हस दिया था।

उसने परदेस देखे थे बरस दस थे। लडकिया भी देखी थी।

पर किसी घाट में उसने डूबकर नहीं देखा था सिर्फ किनारा से छूकर।

और वह सोचता रहा था—शायद डूबना उसका स्वभाव नहीं, या वह चलता है तो एक भार भी उसके साथ चलता है और उसके पैरो को हर जगह कुछ रोक-सा लेता है

इन बरसो में उसने कभी उस लडकी को खत नहीं लिखा था। लडकी ने कहा भी इसी तरह था।

हर देश की दोस्ती उसने उसी देश में छोड दी थी। यह शायद उसका अपना ही स्वभाव था या इसलिए कि उस लडकी ने कहा था।

फिर वापस आते वक्त, जब वह अपना सामान पैक कर रहा था उस स्वटर का हाथ में पकडकर वह कितनी देर सोचता रहा था कि वह उस और चीजों के साथ पैक कर दे या उस लडकी की बात रख ले, और उसे पहन ले।

जो स्वटर पहनकर जाना पाच बरसो बाद वहीं पहनकर आना उसे एक मूर्खता की-सी बात लगी थी। मूर्खता की-सी भी और करामाती

भी ।

और एक हद तक झूठी भी। क्योंकि जिस वदन पर यह स्वेटर पहनना था, वह उस तरह नही था, जिस तरह वह लेकर गया था।

पर उसने स्वेटर को पैक नही किया। गले मे डाल लिया। ऐसे जव वह स्वेटर पहनकर शीशे के सामने खडा हुआ—उसे आर्ट गैलरियो मे वैठे वे आर्टिस्ट याद आ गए, जो पुरानी, और क्लासिक पेंटिंग्ज की हूवहू नकलें तैयार करते हैं।

और स्वेटर पहनकर उसे लगा—उसने भी अपनी एक नकल तैयार कर ली थी।

इस नकल से वह शर्मिन्दा नही था, सिर्फ इस नकल पर वह हस रहा था।

मा को वह सव कुछ याद था, जो कभी उसे अच्छा लगता था। लेकिन वह स्वय भूल गया था।

"देख तो अच्छा वना है ?" मा ने जव पनीर का परांठा वनाकर उसके आगे रखा, तो उसको याद आया कि पनीर का पराठा उसे वहुत अच्छा लगता था। मा ने जाने वाले दिन भी वनाया था।

उसने एक कौर तोडकर मक्खन मे डुवोया, और फिर मां के मुह में डालकर हस पड़ा—"वहा लोग पनीर तो वहुत खाते हैं पर पनीर की परांठा कोई नही वनाता।"

यह छुटपन से उसकी आदतें थी। जव वह वडा री मे होता था, रोटी का पहला कौर तोडकर मां के मुह मे डाल देता था।

"तू सात विलायत घूमकर भी वही का वही है" मा के मुह से निकला और मा की आंखो मे पानी भर आया। भरी आखो मे वह कह रही थी—"तू आया है, सव कुछ फिर उसी तरह हो गया है।"

वह, वह नही था। कुछ भी वह नहीं था, जाते वक्त जो कुछ था,

वह सब बदल गया था। उसन बाप की बात नहीं छेडी थी, सिफ उसके खाली पलग की तरफ देखा था, और फिर आखें परे कर ली था। मा के दिन ब दिन मुरझाते मुह की बात भी नही की थी। छोटे भाई की खर-खबर पूछी थी, पर यह नहा कहा था कि मा को अकेला छोडकर उस इतनी दूर नही जाना चाहिए था। पर मा कह रही थी—सब कुछ फिर उसी तरह हो गया है

झटपट जा काई भुलावा पड जाए क्या हुअ है' उसने सोचा भी यही था। मा के मुह मे अपनी रोटी का कौर भी इसीलिए डाला था।

उसने काई और भी मा की मरजी की बात करनी चाही। पूछा—'भाभा क्सा है ? तुम्ह पस द आई है ?'

मा न जवाब नहीं दिया। सिफ सवाल-सा किया—" मरा ख्याल था तू विलायत से कोई लडकी "

वह हस पडा।

'बालता क्या नही ?

'विलायत की लडकिया विलायत म ही अच्छी लगती हैं, सब वहा छाड आया हू।'

'मैंने तो इस महीने पिछले दाना कमरे खाली करवा लिए थे। सोचा था तुझे जरूरत होगी।'

'य कमरे किराय पर दिए हुए थे ?

छोटा भी चला गया था। घर बडा खाली था इसलिए पिछल कमरे चन्न दिए थे। जरा हाथ भी खुला हो गया था '

'तुम्ह पसा की कमी थी ? उसे परेशानी-सी हुई।

"नही, पर हाथ म चार पैसे हा तो अच्छा होता है।

'छाटे की तनख्वाह थोडी नही, वह

"पर वह भी अब परिवार वाला है आजकल म ही उसके घर "

"सो मेरी मा दादी बन जाएगी···"

उसने मा को हसाना चाहा, पर मा कह रही थी—"मुझे तो कोई उजर नही था जो तू विलायत से कोई लड़की···"

वह मां को 'हंसाने के यत्न में था। इसलिए कहने लगा—"लाने तो लगा था पर याद आया कि तुमने जाते समय पक्की की थी कि मैं विलायत से किसीको साथ न लाऊ।"

उसे याद आया—जाने वाले दिन, वह लडकी जब मिलने आई थी, वह मा को अच्छी लगी थी। मा ने उन दोनो को इकट्ठे देखकर, ताकीद से कहा था—'देख, कही विलायत से न कोई ले आना। कोई भी अपने देश की लडकी की रीस नही कर सकती···'

पर इस वक्त मा कह रही थी—"यह तो मैंने वैसे ही कहा था। तेरी खुशी से मैंने मुनकिर क्यो होना था। पीछे एक खत में मैंने तुझे लिखा भी था कि जो तेरा जी चाहता हो···"

"यह तो मैंने सोचा, तुमने ऐसे ही लिख दिया होगा" वह हस पडा। और फिर कहने लगा—"अच्छा, जो तुम कहो तो मैं अगली बार ले आऊगा।"

"तू फिर जाएगा ?" मा घबरा-सी गई।

"वह भी जो तुम कहो तो, नही तो नही।"

उसे लगा, उसे आते ही जाने की बात नही करनी चाहिए थी। आते वक्त उसे एक यूनिवर्सिटी से एक नौकरी आफर हुई थी। पर वह इतने बरसो बाद एक बार वापस आना चाहता था। चाहे महीनो के लिए ही।

"जो तुम कहोगी तो नही जाऊगा" उसने फिर एक बार कहा।

मां को कुछ तसल्ली आ गई। कहने लगी—"तू सामने होगा, चूल्हे मे आग जलाने की तो हिम्मत आ जाएगी, वैसे तो कई बार चारपाई पर से नही उठ जाता।"

मा, तुम इतनी उदास थीं ता छोटे के साथ, उसके घर '

'मैं यहा अपने घर अच्छी हू। अब तू आ गया है मुझे और क्या चाहिए।

उसको लगा मा बहुत उदास थी। और "शायद" उसकी उदासी का सम्बध सिर्फ उसके अकेलेपन स नहीं किसी और चीज से भी था।

खिड़की मे से आती धूप की लकीर दीवार पर बड़ी नाग-सी रेंग रहा थी। उसने खिड़की के परदे को सरकाया। और उस गलीचे का पीला रग ऐसे लगा जसे निश्चित-सा होकर कमरे म आ गया हो।

'तू थक गया होगा। कुछ सो ले मा ने कहा और मेज पर स प्लेटें उठाकर कमरे से जाने लगी।

नहीं मुझे नींद नहीं आई' उसने हल्का सा झूठ बोला और कहा— 'मैं तुम्हारे लिए एक-दो चीजें लाया हू देखू पूरी आती हैं कि नहीं।'

उसने सूटकेस खोला। एक गरम काली ऊन की शाल थी पता जमी हल्की। मा के कन्धो पर डालकर कहने लगा— यह जाड़े की चीज है पर एक मिनट अपने ऊपर ओढ़कर दिखाओ। यह तुम्हे बड़ी अच्छी लगेगी।'

फिर उसने फर के स्लीपर निकाले। मा के परो मे पहनाकर कहने लगा— 'देखो कितने पूरे आए हैं। मुझे डर था छोटे न हो।'

'इस उम्र म मुझे अच्छे लगेंगे?' मा की आखो म पानी-सा भर आया था।

वह मा का ध्यान बटाने के लिए और चीजें दिखाने लगा। प्लास्टिक की एक छोटी-सी डिब्बी मे कुछ सिक्के थे—इटली के लीरा यूगोस्लाविया के दीनार, बलगारिया के लेवा, हगरी के फारिंटस, रोमानिया के लेई जमनी के दीनार उसने सिक्को को छनकाया और कहने लगा— 'मा, तुमने कहा था न कि छोटे के घर बहुत जल्दी कोई बच्चा '

'हा हा, कहा था' मा कमरे से जान के लिए उतावली-सी लगी।

"यह अपने भतीजे को दूगा।"

और फिर उसने सूटकेस में से और चीज़े निकाली—"छोटे के लिए यह कैमरा, और भाभी के लिए यह…"

मा रुआसी-सी हो गई।

उसका हाथ रुक गया।

"मां, क्या वात है, तुम मुझे वताती क्यों नही ?"

मा चुप थी।

उसने मा के कन्धे पर हाथ रखा।

मा को कोई कही कसूरवार लगता था। पता नही कौन। और सोच-सोचकर उसे अपना मुह ही कसूरवार लगने लगा था। उसने एक विवशता से उसकी तरफ देखा।

"मा, तुम कुछ वताना चाहती हो, पर वताती नही।"

"वह लड़की "

"कौन-सी लडकी ?"

"जो तुझे उस दिन मिलने आई थी, जिसने तेरे लिए एक स्वेटर…"

"हा, क्या हुआ उस लड़की को ?"

"उसने छोटे के साथ व्याह कर लिया है।"

मा के कन्धे पर रखा हुआ उसका हाथ कस-सा गया। एक पल के लिए उसे लगा कि हाथ ने कन्धे का सहारा लिया था पर दूसरे पल लगा कि हाथ ने कन्धे को सहारा दिया था।

और वह हस पडा—"सो वह मेरी भाभी है।"

मां उसके मुंह की तरफ देखने लगी।

"मुझे खत मे क्यो नही लिखा था ?"

"क्या लिखती ··यह उन्होने लिखने वाली वात की थी ?"

"छोटे ने सिर्फ व्याह की खवर दी थी और कुछ नही लिखा था।"

"दोना शरमिन्दे मुझे क्या लिखते।"

खुले सूटकेस के पास जो दूसरा बन्द सूटकेस था, उसपर उसका ओवर कोट और वह स्वेटर पड़ा हुआ था जो उसने सुबह आते वक्त पहना था।

वह एक मिनट स्वेटर की तरफ देखता रहा। स्वेटर गुच्छा-सा होकर अपने आपको ओवर कोट के नीचे छुपाता-सा लग रहा था।

पांच बरस लम्बी सड़क

मेरे हाथ अब मेरे कानो के बचाव के लिए कुछ नही करते। शायद थक गए है, इसलिए। पर मेरे दोस्त ने कानो पर हाथ रख लिए। कहने लगा—"मैंने समझा था ऐसी आवाजें बिल्लीमारा, बत्तियां की गली, और पापड़मंडी में ही आती है···"

मेरे कान मेरे होठो की तरह हस रहे थे ··

"यहा, अफसर लोगो की बस्ती मे भी ऐसा होता है ?" मेरा दोस्त उठकर शीशे की उस खिड़की को बन्द करने लगा, जिसमे से, पडोसियो के घर में से बिल्लीमारां, बत्तियां की गली या पापडमडी के ख्याल जैसा कुछ मेरे कमरे मे आ रहा था।

"एक फर्क शायद तूने नोट नही किया" मैंने इस सरकारी बस्ती को लोगो की साधारण बस्तियो से अलग करने के लिए कहा, "उन बिल्ली-मारा, या जोडेमारा गलियो में जो शोर उठता है वह देसी जबान में होता है, पर इस सरकारी बस्ती के गले में से जो कुछ निकलता है, वह अंग्रेजी में होता है···"

मेरे दोस्त को भी मेरी तरह हंसना पड़ा। कहने लगा—"सो इस-

लिए यह सुपीरियर' गोर है ' भौर फिर उसने एक फिलासफर जसा मुह बनाकर कहा "यार नेशनल जबान से जो इन्ह इनफीरिएरिटी' का ख्याल भाता है तो फिर इटरनेशनल जबान क्यो नहीं बरतते ? '

'इटरनेशनल जबान सिफ चुप होती है, तेरा ख्याल है, उन्हे चुप रहना चाहिए ' मुझे पूछना पडा ।

मेरे दोस्त ने एक फिलासफर की तरह सिर हिलाया ।

'बात यह है मुझे कहना पडा, 'इस जबान स इसान बनता है पर समाज नही बनता ।'

मेरे दोस्त ने घूरकर मेरी तरफ देखा ।

मैंने उसकी त्योरी को अपनी भाखा से उसके माथे पर से हटाया भौर कहा मेरा ख्याल है, इसान को समाज चाहिए पर समाज को इ सान नही चाहिए इसलिए

'इसलिए मेरे दोस्त ने एक बार मेरी तरफ देखा भौर फिर एक बार खिडकी के शीशे की तरफ ।

यह समाज की भावाज है, जो शीशे स टकरा रही है' मुझे हसी भा गई ।

मेरे दोस्त ने भपना एक हाथ माथे पर रखा, पर मुझे लगा जस उसन माथे पर हाथ मारा हो ।

मैंने बडे धीरज से उसे कहा, ' मैं दूर नहीं जाता, इसी पास के घर की मिसाल देता हू । बहुत बरस नही हुए मुश्किल से पाच बरस हुए हैं यहा एक भादमी रहता था '

कोई भौर किरायदार ?'

'भौर नही यही । पर तब यह सिफ एक चुपचाप भादमी होना

१ ऊच किस्म का

२ हीनता

था ”

“फिर ?”

“फिर वही जो मैंने कहा था कि इन्सान को समाज चाहिए···”

“यार, यह समा···” मेरा दोस्त वीच में कुछ वोलने लगा था, पर मैंने कहा, “तव यहा वहुत प्यारी चुप होती थी—घास के रग जैसी हरी-सी चुप, आसमान के रग जैसी नीली-सी चुप, सूरज के रग जैसी सुनहरी-सी चुप, चाद के रग जैसी दूधिया-सी चुप·· ”

“यार, तू शायरी करने लगा है · ”मेरा दोस्त हस पडा।

“यह मेरा कसूर नही” मैंने कहा। और दोस्त के लगाए इल्जाम का जवाव देते हुए कहने लगा, “मुझे हमेशा चुप में वडे रग दिखते है, अपने जिस्म का वादामी रग भी चुप मे दिखता है, कपडो के शोर मे मुझे वह रग कभी नही दिखता·· पर पता नही इस आदमी को यह सारे रग क्यो नही दिखते थे ”

मेरे दोस्त ने फिर फिलासफर-सा मुह वनाया और कहने लगा, “चुप मे दिखने वाला एक रग कब्र का रग भी होता है।”

मुझे हसी आ गई, और मैंने कहा, “फिर मेरा ख्याल है जिन्हे चुप मे यह सारे रग नही दिखते, उन्हे सिर्फ कब्र का रग दिखता है। इस मेरे पडोसी को भी जरूर वही दिखता होगा, तभी वह एक वार छुट्टी लेकर अपने गाव गया था, और जव वापस आया था, उसके साथ एक औरत थी। मुझे याद है, वह दोनो जव यहा पहुचे थे, टैक्सी में से वाते करते उतरे थे···वह शायद मिलकर अपनी-अपनी चुप के कब्र जैसे रग को तोड रहे थे · ”

मेरा दोस्त मुस्करा पड़ा। पूछने लगा, “फिर ?”

“मेरा ख्याल है, कुछ दिनो पीछे उन्हे लगा कि छोटी-छोटी वातो से यह रग नही टूट सकता। पहले वे दोनो वडी धीमी आवाज मे वोलते

थे, फिर बहुत ऊंचा-ऊंचा बोलने लगे ''

"फिर ?'

फिर मेरा ख्याल है कि दोनों को लगा—आवाजों से कुछ नहीं बनता। आवाजें कंकरों की तरह होती हैं, इनसे चुप नहीं टूटती। सो दोनों ने कुछ पत्थर जैसी चीजें ढूंढीं। मर्द ने गालियों का पत्थर पकड़ लिया औरत ने रोने का।

मेरा दोस्त फिर मुस्कराया, और पूछने लगा, 'फिर ?"

'फिर दोनों ने सोचा कि चुप जैसे दुश्मन के लिए वह दो जने काफी नहीं थे, सो उन्होंने एक तीसरे का भी बन्दोबस्त किया। उनके बच्चे ने जब दिन रात गला फाड़ फाड़कर रोना शुरू किया, तो मेरा ख्याल है उन्हें जरूर कुछ तसल्ली हुई होगी।'

मेरे दोस्त ने मेरे कंधे पर एक हाथ मारा और कहने लगा— यह वास्तव में एक बहुत बड़ा हथियार था।

पर यह हथियार डेढ़ बरस बाद खुंडा हो गया' मैंने जवाब दिया, और बताया कि बच्चे ने रोना कम कर दिया था। 'मेरा ख्याल है उन्हें फिर चुप से डर लगने लगा था। सो उन्होंने दूसरे बच्चे का बन्दोबस्त किया।'

मेरा दोस्त खिलखिलाकर हंस पड़ा। और पूछने लगा, "फिर ?"

फिर क्या कोई और रंग होता तो टूट जाता कब्र का रंग नहीं टूटता। उन्होंने चुप के मुकाबले पर बाकायदा एक भरती शुरू कर दी। पहले एक नौकर रखा फिर एक आया। और बारी बारी दोनों को गालियां देकर दिन रात अपनी चुप को तोड़ते रहे। पर इन्सान का गला आखिर इन्सान का गला है थक जाता है। सो वे हारकर एक कुत्ता ले आए '

और मैंने कुर्सी पर से उठकर वह खिड़की खोल दी, जो अभी थोड़ी

देर पहले मेरे दोस्त ने घवराकर वन्द कर दी थी।

"एक औरत की, एक मर्द की, दो वच्चो की, दो नौकरों की, और एक कुत्ते की—ये सात आवाज़े हैं। किसी राग के सात स्वरो की तरह।" मैंने अपने दोस्त को कहा और पूछा, "तू पहचान सकता है, यह कौन-सा राग है?"

मेरा दोस्त हस पड़ा। कहने लगा—"समाज राग" और फिर एक फिलासफर जैसा मुह वनाकर कहने लगा, "जिन्दगी की चुप को तोड़ने के लिए यह राग वहुत ज़रूरी है। यह राग···" वह एकदम चुप हो गया, पता नही क्या कहने वाला था।

फिर सात स्वरो को, जो एक वार एक सास में वज रहे थे, कुछ अलग करता हुआ कहने लगा—"यार, यह कमाल है। आदमी शायद सिर्फ अग्रेजी मे वोल रहा है और औरत कभी अग्रेजी, कभी देसी ज़वान मे···नौकर सिर्फ पहाडी ज़वान में वोल रहे है ··"

"चुप के खिलाफ मिलकर जूझना चाहिए" मेरी हसी अव रुआसी हो गई थी। मुश्किल से इतना कहा, "मेरा ख्याल है, यह इटेग्रेशन का एक सेमिनार है सवके सव उस कुत्ते की आवाज़ मे···मेरा मतलव है उसकी हा मे हा मिला रहे है ··"

थे, फिर बहुत ऊंचा-ऊंचा बोलने लगे "

फिर ?"

'फिर मेरा ख्याल है कि दोनों का लगा—आवाजों से कुछ नहीं बनता। आवाजें कंकरों की तरह होती हैं, इनसे चुप नहीं टूटती। सो दोनों ने कुछ पत्थर जैसी चीजें ढूंढी। मर्द ने गालियों का पत्थर पकड़ लिया, औरत ने रोने का।

मेरा दोस्त फिर मुस्कराया, और पूछने लगा, फिर ?"

"फिर दोनों ने सोचा कि चुप जैसे दुश्मन के लिए वह दो जने काफी नहीं थे सो उन्होंने एक तीसरे का भी बन्दोबस्त किया। उनके बच्चे ने जब दिन रात गला फाड़ फाड़कर रोना शुरू किया, तो मेरा ख्याल है उन्हें जरूर कुछ तसल्ली हुई होगी।'

मेरे दोस्त ने मेरे कन्धे पर एक हाथ मारा और कहने लगा—"यह वास्तव में एक बहुत बड़ा हथियार था।

पर यह हथियार डेढ़ बरस बाद खुंडा हो गया, मैंने जवाब दिया और बताया कि बच्चे ने रोना कम कर दिया था। मेरा ख्याल है, उन्हें फिर चुप से डर लगने लगा था। सो उन्होंने दूसरे बच्चे का बन्दोबस्त किया।'

मेरा दोस्त खिलखिलाकर हंस पड़ा। और पूछने लगा, "फिर ?

'फिर क्या, कोई और रग होता तो टूट जाता कब्र का रंग नहीं टूटता। उन्होंने चुप के मुकाबले पर बाकायदा एक भरती शुरू कर दी। पहले एक नौकर रखा फिर एक आया। और बारी-बारी दोनों को गालियां देकर दिन रात अपनी चुप को तोड़ते रहे। पर इन्सान का गला आखिर इन्सान का गला है थक जाता है। सो वे हारकर एक कुत्ता ले आए '

और मैंने कुर्सी पर से उठकर वह खिड़की खोल दी, जो अभी थोड़ी

देर पहले मेरे दोस्त ने घबराकर बन्द कर दी थी।

"एक औरत की, एक मर्द की, दो बच्चों की, दो नौकरो की, और एक कुत्ते की—ये सात आवाज़े है। किसी राग के सात स्वरो की तरह।" मैंने अपने दोस्त को कहा और पूछा, "तू पहचान सकता है, यह कौन-सा राग है?"

मेरा दोस्त हस पड़ा। कहने लगा—"समाज राग" और फिर एक फिलासफर जैसा मुह बनाकर कहने लगा, "जिन्दगी की चुप को तोडने के लिए यह राग बहुत ज़रूरी है। यह राग···" वह एकदम चुप हो गया, पता नही क्या कहने वाला था।

फिर सात स्वरों को, जो एक बार एक सास में बज रहे थे, कुछ अलग करता हुआ कहने लगा—"यार, यह कमाल है। आदमी शायद सिर्फ अग्रेजी मे बोल रहा है और औरत कभी अग्रेजी, कभी देसी ज़बान मे···नौकर सिर्फ पहाडी ज़बान मे बोल रहे है····"

"चुप के खिलाफ मिलकर जूझना चाहिए" मेरी हसी अब रुआसी हो गई थी। मुश्किल से इतना कहा, "मेरा ख्याल है, यह इटेग्रेशन का एक सेमिनार है सबके सब उस कुत्ते की आवाज मे ··मेरा मतलब है उसकी हा मे हा मिला रहे है ·"

पाच वरस लम्बी सडक

अलमारी का खाना बहुत लम्बा था— उसके कद जितना।

वह अपने कोट के बटन खोलने लगा था, उसका हाथ पहले बटन पर ही रुक गया जस शीशे के बीच वाले हाथ ने उसका हाथ पकड लिया हो।

"कपडे नही बदलागे?" औरत की आवाज आई।

मर्द हस-सा दिया। शीशे मे भी कुछ हिल-सा गया।

'तुमने पिक्चर आफ डोरियन ग्र पढी है?' मर्द न पूछा।

'पिक्चर आफ डोरियन ग्रे?

'आस्कर वाइल्ड की सबसे मशहूर उपन्यास।

'मेरा ख्याल है कालज के दिना म पढी था पर इस वक्त याद नही शायद उसम एक पेंटिंग की कोई बात थी '

"हा, पेंटिंग की। वह एक बडे हसीन आदमी की पेंटिंग था "

'फिर शायद वह आदमी हसीन नही रहा था और उसके साथ ही उसकी पेंटिंग बदल गई थी कुछ ऐसी ही बात थी।"

"नही वह उसकी दिखती शक्ल के साथ नही बदली थी, उसके मन की हालत मे बदली थी। रोज बदलती थी।"

"अब मुझे याद आ गया है। आदमी उसी तरह हसीन रहा था, पर पेंटिंग के मुह पर झुरिया पड़ गई थी··।"

"उसके मन की सोचो की तरह।"

"अब मुझे सारी कहानी याद आ गई है।"

"मेरा ख्याल है, यह शीशा · "

"यह शीशा ?"

"सामने शीशे में देखो, मेरी शक्ल बदल गई है।"

"आज पार्टी में तुमने वहुत पी थी।"

"नही, बहुत नही, मैं अभी और पीना चाहता हू ··यहा अकेले, इस शीशे के सामने वैठकर · और देखना चाहता हू—यह शक्ल और कितनी बदल सकती है ··"

औरत परे खडी थी, उधर पलग के पास। इधर मर्द के पास आई, शीशे के पास। उसकी आवाज में दिलजोई थी, कहने लगी—"आज की पार्टी मे कोई सबसे हसीन आदमी अगर था, तो वह सिर्फ तुम। तुमने उनकी शक्ले नही देखी ? उन सबकी, जिन्हे तुमने पार्टी पर बुलाया था · वह मास के ढेर से···"

"मैं उनकी वात नही कर रहा सिर्फ अपनी कर रहा हू।"

"हा, देख लो शीशे में—तुम्हारा वही चन्दन की गेली जैसा जिस्म। माथा, आखे ···नाक···जैसे खुदा ने फुर्सत मे वैठकर गढे हो· " औरत ने कहा। वह अभी भी दिलजोई की रौ में थी।

"यह शब्दावली शायरो को लिए रहने दो···" मर्द खीझ-सा गया।

"मेरा ख्याल है तुम थक गए हो। वैसे भी रात आधी होने को है · "

"पर तुम शीशे मे क्यो नही देखती ? देखने से डरती हो ?"

"शीशे मे कुछ और हो जाएगा ?"

"हो जाएगा नही, हो गया है।"

'कहां ? कुछ भी नहीं हुआ "

अभी हुआ था मैंने खुद देखा था मैं जब हसा था पीने म मेरट यहीं मुह रो पड़ा था यह गीता डोरियन ग्रे की पेंटिंग की तरह

मैं गुसलखान म से नाइट सूट ला देती हू, तुम कपड़े बदल लो।'

कपड़े सभ्यता की निशानी होते हैं, इस निशानी के बगैर मैं क्या होऊंगा तुमने ही कहा था कि इस पार्टी के लिए मुझे नया सूट सिल वाना चाहिए '

'मैंने ठीक कहा था वह सब तुमसे बड़े इम्प्रेस हुए लगते थ '

'इसलिए मैं यह सूट उतारना नहीं चाहता।'

'पर अब घर म कोई भी नहीं।'

अभी मैं हू

औरत को अब यकीन हो गया था वह कि अब वहक गया है इसलिए बोली नहीं।

मर्द ने ही कहा—'उस वक्त मैंने उनको इम्प्रेस किया था, पर इस वक्त अपने आपको करना है, इसलिए अभी यह सूट नहीं उतार सकता।'

औरत चुप थी।

कुछ ह्विस्की बची है ? मर्द न पूछा।

औरत के मुह पर मे एक नाच की परछाइं गुजर गई। परछाइं को पसीने की तरह पोछकर बोली वह— नहीं।'

'मेरा ख्याल है, तुम्हें झूठ बोलने का अभी ढग नहीं आया।' मर्द हस दिया।

"पर इस वक्त मैं और नहीं पीने दूगी।'

"सिर्फ एक गिलास "

'नहीं।"

'तुमने उन्हें किसी गिलास के लिए मना नहीं किया था।

"वे गेस्ट थे···"

"रिस्पेक्टेबल स्पोट···रिस्पेक्टेबल सिर्फ वे थे, मैं नही ?"

"मैंने रिस्पेक्टेबल नही कहा, सिर्फ गेस्ट कहा है,"

'तुम मुझे भी अपना गेस्ट समझ लो···"

'क्या ?"

"यह घर तुम्हारा है, मैं तुम्हारा गेस्ट हूं,"

"यह घर सिर्फ मेरा है ?"

"घर सिर्फ औरत का होता है।"

औरत को इस वक्त कुछ भी कहना ठीक नही लगा। उसे लगा कि इस वक्त सिर्फ सो जाना चाहिए। वह चुपचाप गुसलखाने में गई, और मर्द का नाइट-सूट लाकर, पलग की बाहो पर रख दिया।

मर्द ने कमरे के हल्के नीले आयल पेंट की तरफ देखा, पलग की रेशमी सलेटी चादर की तरफ, फिर टेबल लैम्प के आसमानी शेड की तरफ ·· और उसका जी चाहा, वह औरत से कहे—इस कमरे का सारा कुछ ·बरसो से उसकी कल्पना थी। इस कमरे की भी और बाहर के बडे कमरे की भी ··इस सब कुछ को चाहती वह खुद कहती थी कि उसके दफ्तर से उसे कोई वास्ता नही, पर अपना घर वह अपनी मरज़ी से बनाएगी, घर औरत का होता है···

सिर उसने नाइट-सूट की तरफ देखा। और सिर्फ इतना कहा—"यू आर ए वडरफुल होस्ट ··आई मीन होस्टेस···"[1]

औरत अभी भी चुप थी।

सिर्फ वही कह रहा था—"मेरी मेहरबान, अब एक गिलास व्हिस्की दे दो।"

औरत को लगा कि इस वक्त गिलास वाली बात को टाला

---

१. तुम बहुत अच्छी मेजबान हो ·

नहीं जा सकता। वह बाहर के कमरे म गई और कुछ मिनटो के बाद उसने एक गिलास लाकर मेज पर रख दिया।

'यू आर रीयली ए डालिग।'[1] मद ने व्हिस्की के पहले नही पर तीसरे घूट के साथ कहा।

औरत को कुछ याद आया—और वह खोल सा गई— मुझे यह शब्द अच्छे नही लगत।'

क्यो ?'

आज की पार्टी मे बिल्कुल यही शब्द तुम्हारे एक मेहमान ने तुम्हारी सेक्रेटरी को कहे थे।

पर वह नाराज नही हुई थी।

वह सेक्रेटरी है मैं बीवी हू।

'यह फर्क कसा लगता है ?

डिस्गस्टिग[2]।

'डिस्गस्टिग बीवी होना या कि सेक्रेटरी होना '

मेरे ख्याल म सेक्रेटरी होना।

यू आर राइट।

मद न व्हिस्की का घूट भरा और कहने लगा, एक मरिड औरत की पोजीशन सचमुच बडी शानदार होती है। वह जब चाहे नाराज हो सकती है। जिस बात पर और जब चाहे पर बेचारी सेक्रेटरी

इस तन्ज का मतलब ?

'यह तन्ज नही।

फिर यह क्या है ?

एक फक्ट।'

---

१ तुम सच में प्रिय हो।
२ घृणित

"उससे बडी हमदर्दी है ?"

"उसके साथ नही, सिर्फ उसके सेक्रेटरी होने से ।"

"इसीलिए उसकी हर दूसरे महीने तरक्की हो जाती है ?"

"यह तरक्की नही डियर, यह रिश्वत है। सिर्फ यह रिश्वत का नया तरीका है।"

"किस चीज की रिश्वत ?"

"हमारी एजेन्सी को जिस सेठ ने अपने मिल का एडवरटाइजिंग एकाउट दिया है, यह उसकी शर्त थी...उस लडकी की तरक्की भी उसी की शर्त है..."

"यह उस सेठ की..."

"ए कैप्ट विमैन।"[1]

"इट इज आल डिस्गस्टिग ?"[2]

"येस, इट इज आल डिस्गस्टिग ।"

"पर तुम्हे उससे हमदर्दी किस बात की है ?"

"क्योकि मै उसका हमपेशा हू ।"

"क्या मतलब ?"

"हम सब.. सब...उसके हमपेशा है..."

"किस तरह ?"

"वी आर नॉट मैरिड टु अवर वर्क...वी आर आल लाइक कैप्ट विमैन .."[3] मर्द हसा फिर कहने लगा—"आज की पार्टी से भी यह जाहिर था। मैंने उनको खुश करने के लिए यह सब कुछ किया था। पाच लाख एक साल के बिजनेस का सवाल था ."

---

१. रखैल

२. यह सब बडा घृणित है।

३. हमारी शादी अपने काम से नही हुई है 'हम सब रखैलों की तरह है।

मद ने व्हिस्की के गिलास का आखिरी घूट भरा, शीशे की तरफ देखा। पता नहीं उसे क्या नजर आया उसने एक बार आंखें बन्द-सी कर ली। फिर दोनों ही वे उस शीशे की तरफ नहा, खाली गिलास की तरफ देख रही थीं।

'मेरी मेहरबान, एक गिलास और।

"नहीं, और नहीं।"

'आज जाने-गुलामी है।'

औरत ने अपनी घबराहट को माथे पर से पसीने की तरह पोछा।

'देख मेरी जान आज की पार्टी ने अगले साल का बिजनेस भी पक्का कर दिया है। इसका मतलब है—अगले साल भी पांच लाख का बिजनेस। इसलिए मैंने नया सूट पहना था वे औरतें मेरा मतलब है क्ष्ट विमन इसी तरह नई साड़ी पहनती हैं फिर सारा वक्त दिल फरेब बातें उन्हें किसी भी बात से नाराज होने का हक नहा होना मैं भी किसी बात से नाराज नहीं हुआ '

औरत ने मर्द के पास होकर उसके कोट के बटन खोले। बटन खोलते हुए वह काफी देर तक उसकी छाती के पास खड़ी रही। शायद मर्द के हाथ की किसी हरकत का इन्तजार कर रही थी

रात कमरे में भी अडोल थी दूर परे तक भी अडोल थी। मर्द के अंगों की तरह।

और फिर अचानक एक कुत्ते के भोंकने की आवाज आई। और औरत को लगा—उसकी छाती म भी कुछ था जो इस वक्त

कुत्ते के भौंकने की आवाज बायें हाथ वाली कोठी की तरफ से आई था। फिर अगले मिनट दायें हाथ वाली कोठी की तरफ से भी आई। शायद जवाब की सूरत मे।

'व्हाट ए डुइट ' मद ने खाली गिलास की तरफ देखा, और औरत

को हाथ से परे करता हुआ, बाहर के कमरे में से और व्हिस्की लाने के लिए चला गया।

गिलास मे बर्फ का एक टुकडा शायद उसने ऊपर से और डाला था, गिलास छलक-सा गया था। गिलास को छलकने से बचाने के लिए उसने दहलीज ही मे खडे होकर एक घूट भरा, और फिर कमरे में आता हुआ कहने लगा—"आई एम सैलीब्रेटिंग दिस डुइट।"[1]

कुत्ते भौक रहे थे—बारी-बारी।

"दिस इज़ फार द हेल्थ आफ डॉग्ज़···[2]

उसने गिलास में से एक घूट भरा।

औरत ने घबराकर पहले कमरे की बाईं दीवार की तरफ देखा, और फिर दाईं की तरफ। बाहर भौकते कुत्तो की आवाजो मे से, एक आवाज़ बाईं दीवार से टकरा रही थी, एक दाईं से।

"रात को सिर्फ डुइट होता है।" मर्द हस-सा पडा और कहने लगा, "पर सवेरे पूरा कोरस होता है। बाये हाथ वाली कोठी में कोई अमरीकन है। उसके सारे कमरे एअरकंडीशंड है, इसलिए उसे कोई फर्क नही पडता, पर सुबह के वक्त उसका खानसामा, उसका बैरा, और कोठी का जमादार, जिस तरह एक-दूसरे पर भौकते है, लगता है कोठी मे एक नहीं पूरे चार कुत्ते भौक रहे हैं · "

"डार्लिंग, तुम सोने की कोशिश क्यो नही करते ?" औरत ने, थक गई औरत ने, कहा।

"आई एम ड्रिंकिंग फार दी हेल्थ आफ डाग्ज़ ··"

औरत चुप-सी पलग की बाही पर बैठ गई।

"तुमने मेरी पूरी बात नही सुनी। मै तुम्हे बता रहा था सुबह,

---

१. मै इस युगलगान का जश्न मना रहा हू।

२. यह जाम कुत्तों की सेहत के लिए।

कर खडा हो गया। फिर शीशे के सामने आया—"देख सामने। यह मैं बूटो के तसमे खोलता हू, इसमे देख किसके पैर है—माई गाड। निरे उस सेठ के पैर यह शीशा आज डोरियन ग्रे की पेंटिग की तरह ··"

"इस वरस यह एक सेठ के पैर है, पिछले वरस यह जरूर एक बैंकर के पैर होगे। पिछले वरस मैंने यह शीशा नही देखा था। इस तरह नही देखा था ··और उससे पिछले वरस···" मर्द ने एक वार बौखलाकर औरत की तरफ देखा, और पूछा, "कितने वरस हुए हैं? जिस वरस मैंने तुम्हारे साथ व्याह किया था, उसी वरस ·"

"सिर्फ पाच वरस···" औरत ने धीरे से कहा।

"और सिर्फ पाच वरसो मे मेरी शक्ल वदल गई है? और पाच मे या और पाच मे यह शक्ल ··"

"तुम्हारी शक्ल उसी तरह है।" औरत ने कहना चाहा। पर कहा नहीं। पहले भी वह यह वात कह चुकी थी। कोई फर्क नही पडा था।

"तुम चुप क्यो हो?" मर्द ने अचानक पूछा।

औरत फिर भी नही वोली।

"व्हाई डोट यू वार्क लाइक ए डॉग "[1]

औरत के मन मे एक वचैनी-सी हुई। उसे लगा कि वह सचमुच कुछ कहना चाहती थी—कहना नही, एक कुत्ते की तरह···और औरत ने अपनी छाती पर एक हाथ रख लिया। उसे लगा, उसका छाती धौक रही थी।

"तुम अब भी चुप हो, उस वक्त भी चुप थी···" अचानक मर्द ने कहा।

"उस वक्त? किस वक्त?" औरत चौक-सी गई।

मर्द फिर हस-सा पडा। कहने लगा—"तुम्हारा ख्याल है, मैंने देखा नही था? जिस वक्त उस सेठ ने तुमसे हाथ मिलाया था, कहा था, 'थैंक

१. तुम कुत्ते की तरह क्यों नहीं भोंकते

यू मैडम ' और उसने तुम्हारा हाथ भींचा था तुम्हारी तरफ देखते हुए उसकी नजर एक शिकारी कुत्ते की तरह "

औरत कुछ देर मर्द की तरफ देखती रही, फिर कहने लगी— एक हमारे पहले घर की पड़ोसिन थी, उसका मर्द आए दिन घर मे एक नई औरत लाता था। वह हमेशा चुप रहती थी। मुझे भी कुछ ऐसा ही लगा था उस बात का इस बात से कोई सम्बन्ध नही पर फिर भी कुछ इसी तरह लगा था मैंने सोचा मेरे कुछ बोलने से तुम्हारा कारोबार

औरत ने आंखो मे आए हुए पानी को पसीने की तरह पोंछा।

'मैं भी चुप रहा था' मर्द ने कहा और मेज पर रखा हुआ गिलास फिर हाथ मे पकड़ लिया। गिलास को आखिरी घूंट तक पीता हुआ कहने लगा—'इट इज फार आल द डॉग्ज—द मैड वन्स द हंटिंग वन्स द बार्किंग वन्स ऐंड[1] 'मर्द ने पहले मुसकराकर औरत की तरफ देखा, फिर धीमे मे और कहा—'ऐंड द साइलेंट वन्स[2]'

---

१ यह जाम सारे कुत्तो के लिए है पागल कुत्तो के लिए शिकार करने वाले कुत्तो के लिए भौंकने वाले कुत्तो के लिए और

२ और उन कुत्तो के लिए जो चुप रहते हैं

पांच बरस लम्बी सड़क

उसे अपनी छाती में शहद का एक छत्ता-सा लगा हुआ लगता। उसकी सोचें शहद की मक्खियों की तरह उडती, वडे अजीव फूलो को सूघती, और वडा अजीव शहद जोडती।

कई वार वह हाथ मारकर सोचो को उडाता, उनका जोडा हुआ शहद पीता। पर कई वार उसकी सोच की कोई मक्खी उसके अपने ही हाथ पर काट लेती। वह एक हाथ से दूसरे हाथ में से मक्खी का डक निकालता रहता।

पर कई डक वहुत गहरे होते है। हाथ को सूजन चढती जाती है, डक नही निकलता। पिछले दिनो मे एक ऐसा ही डक, उसे वहुत दिनो तक दुखी करता रहा था—मायकोवस्की ने सुसाइड क्यो किया?

मायकोवस्की की नज्मो का शहद पीते हुए, एक दिन अचानक उसे इस सोच ने डक मार दिया था।

इस तरह की एक सोच ने उसे जर्मनी में भी डक मारा था—एक गैलरी मे उसने सुभाषचन्द्र वोस की आदमकद तस्वीर देखी थी, और उसकी आखे तड़पकर सूजने लगी थी—सुभाषचन्द्र वोस आज जीता

क्या नही ?

आज भी उसके हाथ पर एक सूजन चढ रही थी कि आखिर अपने कमरे की एक चाबी उसने एक लडकी को क्यो दी हुई थी ?

इस एक मक्खी का डक उसने कई बार खाया था, बहुत बरस हुए जब उसने अपने कमरे की एक चाबी उस लडकी को दी थी।

उस दिन वह एक नज्म पढ रहा था उसके दफ्तर म काम करन वाली एक लडकी उसका दरवाज़ा खटकाकर उसस कोई किताब मागने आइ थी पहले भी आती थी पर उस दिन उसने उस लडकी को वह नज्म सुनाई थी—

क्या मैं ब्याह कर लू ? क्या मैं अच्छा बन जाऊ ? अचानक उसने नज्म की पहली पक्ति पढी थी। लडकी कीली हुई सी खडी रह गई थी। और उसने आग नज्म पढी थी सबसे नजदीक एक पडोसिन लडकी है एक दिन मैं उसे कहूगा कि वह कुछ महसूस करे क्योकि कुछ महसूस करना एक अच्छी बात है फिर वह मुझे अपने मा बाप स परिचित करवाने क लिए ल जाएगी। उस दिन मैं अच्छी तरह बाल सवारूगा टाई से गल को घाटूगा और एक अजनबी कमरे म जाकर एक पुरान सोफे पर बठ जाऊगा और फिर सारा कुटुम्ब मरी तरफ दखेगा और सोच विचार करगा

उस नज्म का सुनती हुई लडकी ने कुछ नही कहा था। सिफ हस दी थी। वह नज्म पढता रहा था फिर मा बाप कहगे अच्छा तू हमारी बेटी से ब्याह कर ले हम बेटी गवा नही रहे हैं बल्कि एक बेटा पा रह हैं। और फिर वह ब्याह रचाया जाएगा।

'फिर ? नज्म का सुनते हुए लडकी ने कहा था।

'फिर सब बडे-बूढे इकट्ठे हो जाएगे, और फिर सबकी आंखें खाने

की मेज की तरफ घूरेगी। वडे पकवानो की खुशवू उनके नथनो मे घुसेगी, और शराव के इन्तज़ार मे वह होठो पर जीभ फेरेगे…"

नज्म सुनती हुई लड़की हस पडी थी, और उसने पूछा था—"फिर ?"

"फिर पादरी मेरी तरफ देखेगा, सोच रहा होगा कि आज तक यह आदमी एक औरत के जिस्म के विना कैसे दिन गुजारता होगा, और फिर मुझसे कहेगा, 'तुम अव से इस औरत का जिस्म कानूनी तौर से वरत सकते हो '"

नज्म सुनती हुई लडकी ने कहा कुछ नही था, सिर्फ हुकारा-सा भरा था।

उसने मेज की तरफ हाथ करके पैकेट मे से एक सिगरेट निकाला था और उसे जलाकर नज्म पढने लगा था—"फिर मैं व्राइड को चूमने के लिए आगे वढूगा, ऐसे, जैसे कमरे के कोनो मे खड़े लोगो ने मुझे धक्का देकर आगे कर दिया हो‥"

नज्म की अगली पक्तिया उससे जल्दी से अनूदित नही हुई थी, उसने उसी तरह पढ दी थी, "ऐंड इन देयर आइज यू कुड सी सम ऑव-सीन हनीमून गोइग आन…"[1]

नज्म सुनती हुई लडकी की काली आखो मे एक ग्लानि-सी आई थी और उसे नज्म सुनाते हुए लगा था कि यह नज्म उस लडकी को नही सुनानी चाहिए थी। वह हाथ मे पकडी हुई किताव को मेज पर रखने लगा था, जिस वक्त लडकी ने जोर देकर कहा था कि वह सारी नज्म सुनना चाहती है। और उसको लगा कि काली आखो मे भी वह ग्लानि थी, जो नज्म में मर्द की भूरी आखो मे थी। इसलिए वह नज्म आगे पढने लगा था·

---

१. और उनकी आखों में तुम अश्लील हनीमून मनाया जाता देख सकोगे‥

'फिर नियागरा फाल के किनारे पर हनीमून मनाने जाऊंगा। सब वहां जाते हैं। होटल के सब कमरों में सिर्फ़ ताबिंद बीवियां और फल तथा चाकलेट होते हैं। और सब उस रात एक सी ही बात करते हैं। होटल के क्लर्क को भी पता होता है कि सब अपने कमरों में उस रात '

नज़म सुनती हुई लड़की खिलखिलाकर हंस पड़ी थी 'ए वल रिग्न पोयम!' उसने कहा था और किताब के पास झुककर उस नज़म के शायर का नाम पढ़ा था—ग्रेगरी कारसो।

लड़के की समझ पर उसका अविश्वास कुछ विश्वास बन गया था और वह आगे नज़म पढ़ने लगा था 'और फिर होटल के क्लर्क की आंखों में देखता मैं चीख सा पड़ूंगा—यह हनीमून मुझसे नहीं होगा। और मैं नियागरा फाल के नीचे काली गुफा में घुस जाऊंगा। मैं एक मैड हनीमूनर। और गुफा में बैठकर मैं इस ब्याह को तोड़ने की तरकीब सोचूंगा। एक समाधि सी लगाऊंगा—मैं ए सेंट आफ डाइवोर्स।

लड़की बहुत ध्यान से नज़म सुन रही थी। उसने लड़के से मज़ाक किया—'वोंट यू लाइक टु वरशिप ए सेंट आफ डाइवोर्स?'[1]

लड़की हंस दी थी। जवाब में उसने एक अधूरा सा वाक्य भी कहा था 'आई विश आई एम आलरेडी'[2] पर फिर उसने वाक्य की तरफ से ध्यान हटाकर नज़म की तरफ कर लिया था और कहा था—'आगे नज़म सुनाओ'

वह नज़म सुनाने लगा था 'पर मुझे ब्याह करना चाहिए एक अच्छा आत्मा बनना चाहिए। यह कितना अच्छा होगा जब मैं शाम को घर लौटूंगा आग तापूंगा मेरे कमरे की खिड़की बाहर सेनों की ओर नहीं खुलेगी, मैं शहर की किसी इमारत की सातवीं मंज़िल के एक छोटे

१ तुम तलाक के संत की पूजा करना नहीं चाहोगी?
२ मेरा ख्याल है मैं पहले हूं

और वदवूदार कमरे मे वैठूगा, और मेरी वीवी आलू छीलती हुई कोई अच्छी नौकरी ढूढने को कह रही होगी···मेरे वच्चे नाक पोछ रहे होगे और मेरे वूढे पडोसी मेरे कमरे मे टेलीवीजन देखने के लिए आ रहे होगे···"

यह नज्म सुनती हुई लडकी हसी से दोहरी-सी हो गई थी। और उसने आगे नज्म पढी थी, "नही, मैं व्याह नही कर सकता, कभी भी नही करूगा पर यह भी तो हो सकता है कि मेरा व्याह किसी वडी अमीरजादी के साथ हो जाए और नाजुक-सी, पीली-सी लडकी, काले दस्ताने पहनकर, मेरे साथ शहर की सवसे ऊची इमारत पर खडी, सिगरेट पीती रहे, और सारे शहर का दृश्य देखती रहे। पर नही। मैं उस खिडकी मे नही खडा हो सकता जहा सपने कैद होते है · "

उसने देखा—नज्म सुनती हुई लडकी का चेहरा वडा सजीव-सा हो गया था। गम्भीर भी। इसीलिए उसने नज्म जारी रखी थी, "पर मुहव्वत वाली वात तो मै भूल ही गया। यह नही कि मुझमे इश्क करने की हिम्मत नही, पर मुझे पता है कि इश्क को कुछ दिनो वाद टूटी हुई जूती की तरह घसीटना पडता है ·"

उसको लगा कि नज्म सुनती हुई लडकी का मुह कुछ पीला हो गया था। उसे हसी-सी आई और उसने आगे नज्म पढी, "पर यह भी क्या हुआ कि मैं सारी उम्र अकेला एक कमरे मे वैठा हुआ वूढा हो जाऊ, और सारी दुनिया व्याही जाए, और एक अकेला मैं ही कुआरा रह जाऊ मेरा ख्याल है, दुनिया मे कही एक मेरे योग्य औरत का अस्तित्व भी सभव है, इसी तरह जैसे मेरा अपना सम्भव हुआ है। मै सिर्फ उसके साथ व्याह करूगा। वह उस 'शी' की तरह होगी जो दो हज़ार वरस तक अपने इजिप्शियन आशिक का इन्तजार करती रही ··"

नज्म सुनती हुई लडकी ने हाथ आगे करके उससे किताव मागी थी।

'फिर नियागरा फाल के किनारे पर हनीमून मनाने जाऊँगा। सब वहाँ जाते हैं। होटल के सब कमरों में सिर्फ़ शादी के बाद मियाँ और बीवी तथा चार कलटें होते हैं। और सब उस रात एक सी ही बात करते हैं। होटल के क्लर्कों को भी पता होता है कि सब अपने कमरों में उस रात...'

नज़्म सुनती हुई लड़की खिलखिलाकर हँस पड़ी थी, 'ए वेन रिम्न पोयम!' उसने कहा था और किताब के पास झुककर उस नज़्म के शायर का नाम पढ़ा था—ग्रेगरी कॉरसो।

लड़की की समझ पर उसका अविश्वास कुछ विश्वास बन गया था, और वह आगे नज़्म पढ़ने लगा था, 'और फिर होटल के क्लर्क की आँखों में देखता मैं चीख़-सा पड़ूँगा—यह हनीमून मुझसे नहीं होगा। और मैं नियागरा फाल के नीचे काली गुफा में घुस जाऊँगा। मैं, एक मैड हनीमूनर। और गुफा में बैठकर मैं इस ब्याह को तोड़ने की तरकीब सोचूँगा। एक समाधि सी लगाऊँगा—मैं ए सेंट ऑफ़ डाइवोर्स।

लड़की बहुत ध्यान से नज़्म सुन रही थी। उसने लड़की से मज़ाक़ किया—'डोंट यू लाइक टु वरशिप ए सेंट ऑफ़ डाइवोर्स?'[1]

लड़की हँस दी थी। जवाब में उसने एक अधूरा-सा वाक्य भी कहा था, 'आई थिंक आई एम ऑलरेडी...'[2] पर फिर उसने वाक्य की तरफ़ से ध्यान हटाकर नज़्म की तरफ़ कर लिया था और कहा था—आगे नज़्म सुनाओ।

वह नज़्म सुनाने लगा था, '...पर मुझे ब्याह करना चाहिए, एक अच्छा आदमी बनना चाहिए। यह कितना अच्छा होगा जब मैं शाम को घर लौटूँगा, आग तापूँगा, मेरे कमरे की खिड़की बाहर खेतों की ओर खुले, या शायद मैं शहर की किसी इमारत की सातवीं मंज़िल के एक छोटे

1. तुम तलाक़ के संत को पूजा करना नहीं चाहोगी?
2. मेरा ख़्याल है मैं पहले ही...

और वदवूदार कमरे में वैठूगा, और मेरी वीवी आलू छीलती हुई कोई अच्छी नौकरी ढूढने को कह रही होगी· ·मेरे वच्चे नाक पोछ रहे होगे और मेरे वूढे पडोसी मेरे कमरे मे टेलीवीजन देखने के लिए आ रहे होगे·· "

यह नज्म सुनती हुई लडकी हसी से दोहरी-सी हो गई थी। और उसने आगे नज्म पढी थी, "नही, मै व्याह नही कर सकता, कभी भी नही करूगा पर यह भी तो हो सकता है कि मेरा व्याह किसी वडी अमीरजादी के साथ हो जाए और नाजुक-सी, पीली-सी लडकी, काले दस्ताने पहनकर, मेरे साथ शहर की सवसे ऊची इमारत पर खडी, सिगरेट पीनी रहे, और सारे शहर का दृश्य देखती रहे। पर नही। मै उस खिडकी मे नही खडा हो सकता जहा सपने कैद होते है · "

उसने देखा—नज्म सुनती हुई लडकी का चेहरा वडा सजीव-सा हो गया था। गम्भीर भी। इसीलिए उसने नज्म जारी रखी थी, "पर मुहव्वत वाली वात तो ,मैं भूल ही गया। यह नही कि मुझमे इश्क करने की हिम्मत नही, पर मुझे पता है कि इश्क को कुछ दिनो वाद टूटी हुई जूती की तरह घसीटना पडता है ·"

उसको लगा कि नज्म सुनती हुई लडकी का मुह कुछ पीला हो गया था। उसे हसी-सी आई और उसने आगे नज्म पढी, "पर यह भी क्या हुआ कि मै सारी उम्र अकेला एक कमरे मे वैठा हुआ वूढा हो जाऊ, और सारी दुनिया व्याही जाए, और एक अकेला मै ही कुआरा रह जाऊ मेरा ख्याल है, दुनिया में कही एक मेरे योग्य औरत का अस्तित्व भी सभव है, इसी तरह जैसे मेरा अपना सम्भव हुआ है। मै सिर्फ उसके साथ व्याह करूगा। वह उस 'शी' की तरह होगी जो दो हजार वरस तक अपने इजिप्शियन आशिक का इन्तजार करती रही···"

नज्म सुनती हुई लड़की ने हाथ आगे करके उससे किताव मागी थी।

उसने किताब दे दी थी।

'ग्रेगरी कारसो ने पता नही यह नज्म किसके बारे मे लिखी ?' लडकी ने कहा था।

'जरूर अपने बारे म लिखी होगी।' उसन जवाब दिया था।

"यह भी तो हो सकता है, तुम्हारे बार म लिखी हो लडकी अचानक हस पडी थी।

उसे भी हसना पडा था। और उसन कहा था— आई टेक दट ऐज ए कम्प्लामेंट।[१]

कम्प्लामट तो है पर क्या फायदा ? लडकी ने एक अजर सा दिखाया था और पूछा था इस नज्म का पात्र बनना ? कि वह इजिनियन ?'

'सिफ नज्म का पात्र। उसन जवाब दिया था।

'पर वह इजिनियन क्यो नही ?' लडकी न फिर सवाल किया था।

वह हस दिया था और उसन कहा था वह इजिनियन सिफ एसा कोइ व्यक्ति बन सकता है जिसका कोइ भी दो हजार बरस स इत जार कर रही हो।

लडकी चुप सी हो गइ थी फिर उसने कहा, 'आई एम दट ना।[२]'

इसपर वह हस दिया था। उसे लगा था कि एसी बातो को सिफ हसकर गवाया जा सकता है। और उसन कहा था 'इफ यू आर दट नी, आई नल टाइ माई बस्ट टु बी दैट इजिनियन।[३]'

लडकी वह किताब पढना चाहती थी इसलिए उसन वह किताब दे

---

१ म इस अपना तारीफ मनता हू।

२ म हो वह औरत हू।

३ अगर तुम वह औरत हो तो म भी वह इजिनियन बनन की पूरी कोशिश करूगा।

न्दी थी। पर वह अभी और भी किताबे देख रही थी, इसलिए उसने अपने कमरे की दूसरी चावी उसे दे दी थी। कहा था—"मै अगले हफ्ते एक महीने की छुट्टी पर जा रहा हू, तुम पीछे जब तुम्हारा जी चाहे कमरा खोल लेना, और किताबे देख लेना "

उस दिन जब वह लडकी चली गई थी तो वह कुछ पछता-सा गया था। उसको लगा था कि उसे अपने कमरे की चावी उस लडकी को नही देनी चाहिए थी।

इस बात को कोई पाच वरस हो गए थे पर उसने आज तक उस लडकी से कमरे की चावी वापस नही मागी थी।

"आखिर अपने कमरे की एक चावी मैंने उस लडकी को क्यो दे रखी है ?" आज उसकी इस सोच ने उसे पता नही कैसा डक मारा था, उसने उठकर काफी का एक प्याला बनाना चाहा, पर उसमे पानी गरम करने और उसमे काफी घोलने की हिम्मत न हुई। उसके हाथ सूज रहे थे। उसने आधी-पौनी रात के अधेरे मे उठकर समुद्र के किनारे जाना चाहा, समुद्र का किनारा उसके कमरे से दूर नही था, पर उसके पैर नही हिले थे, उसके पैर सूज रहे थे। और हारकर उसने अपना ध्यान किसी और तरफ लगाना चाहा। वह भी नही हुआ, जैसे उसका ध्यान भी सूजता जा रहा था।

आज की सोच पता नही कैसा डक मार गई थी

'सोच की मक्खी डक मारती है, पर शहद भी जोडती है' उसे ख्याल आया, और वह उस लडकी से अपने परिचय के वरसो को ऐसे सोचने लगा, जैसे वह शहद की बूदो और मक्खियो के डको को अलग-अलग कर रहा हो।

मगर पहले मुझे उस लडकी का मुह नही दिखा था, उसकी आवाज दिखा था उस याद आया। उसके दफ्तर म ज्यादातर एग्लोइडियन लडकिया थी, कुछ गुजराती भी था, पर पजाबी कोई नहा था। वह जब स यहा बम्बइ आया था दूसरी जबान बोलता थक गया था। दफ्तर म अग्रेजा और हिदी स माथा मारना पडता था उसने नोक नोक म गुजराती भी सीख ली थी। पर कभी वह अपनी जबान मे कुछ कहने का और सुनने का तरस जाता था। और फिर एक दिन उसने उस लडकी की आवाज सुनी

फिर शायद आवाज का मोह उसे होठो के माह तक ल गया था

उसने बिस्तर मे से उठकर कमरे की खिडकी खोली, और बाहर क अधेर का एसे देखने लगा जस बीते हुए बरसा का सडक बाहर के अधेर म स गुजर रही हा

सडक वही की वही रहती है सिफ राही गुजर जाते है 'उसे हसी मा आ गई और उस लगा राहा भी सिफ चलते हैं पहुचते कहा नहीं—जैसे अपने कानो से लेकर किसीकी आवाज तक, फिर आवाज से लकर होंठो तक फिर होठो से लकर कुछ और अगो तक, और फिर—उसस आगे वापस उनके अपने कान आ जाते हैं प्यासे और अधेरे की तरफ देखते किसी आवाज का इन्तजार करते शायद धरती का तरह मन के सफर वाली सडक भी गोल होती है अपने से चलती है अपने तक पहुचती है और फिर अपने स चलती है

उसे अपने बचपन की एक बात याद आई—उसकी मा जब चूल्हे क पास बैठकर रोटी पकाती थी वह चिमटे स आग की लपट को पकडने की कोशिश करता था। मा कहती थी—'चिमटे स जलता हुआ कोयला तो पकडा जा सकता है, पर आग की लपट नहीं पकडी जा सकती।

पर वह कोयले को नही, आग की लपट को पकडना चाहता था··

उसको लगा—हर एक जिस्म बुझे हुए, या जलते हुए कोयले की तरह होता है। और उसने जब भी, और जहा भी किसी लडकी के जिस्म को छुआ था, एक बुझे हुए या जलते हुए कोयले को पकडा था—उसने आग की लपट को कभी पकड़कर नही देखा था· ·

पर वह कोयले को नही, आग की लपट को पकडना चाहता था, और यह वात उसने उस लड़की को भी वताई थी।

उसने वह 'शी' होने का दावा किया था, जो दो हजार वरस से अपने इजिप्शियन लवर की इन्तजार कर रही थी · इसीलिए एक वार उसे यह वात वतानी पड़ी थी · और उसे याद आया, उसने यह वात सिर्फ उस लडकी को नही वताई थी, एक वार उसने यह वात एक जर्मन लडकी को भी वताई थी—वह जव पिछले साल दफ्तर की तरफ से एक साल के लिए जर्मनी गया था ··

'उस रात मैं वहुत अकेला था·· एकाकीपन पत्थर जैसा ठोस नही था·· पानी की तरह पिघला हुआ था · '

'सिर्फ पानी की तरह ही नही कि मैं टखनो तक, घुटनो तक भीगता उसके वीच मे से गुज़र जाता· वह कुछ गाढी, कुछ पतली एक दलदल की तरह मुझे अपने मे खीच रहा था· डुवो रहा था···उस लडकी के वदन को मैंने एक किनारे की तरह हाथ डाला था·· पर उसके भूरे वाल · ' उसका जिस्म कांप-सा गया, और उसे याद आया, एक वार आखे वन्द करके, और फिर खोलकर जव उसने उस लडकी के वालो की तरफ देखा था तो अचानक वह भूरे नही रहे थे, काले हो गए थे· ·

'यह क्या था ?' वह कई दिन सोचता रहा था। वह भूरे वालो वाली लड़की, एक पल के लिए काले वालो वाली लडकी क्यो वन गई

किसी भी लडकी से नहीं कट रहा था।

'इट इज माई ओन सेल्फ', ह ए'टड माइ हाट लाइक ए ब्लो आफ नाइफ उसने खिडकी म स बाहर आसमान की तरफ देखा, और ऐसी ऊची आवाज म कहा, जैसे वह बात उसने बादलेयर को सुनाई हो।

आसमान चुप था। सिफ कमरे का दरवाजा धीमे से खोला।

उसने दरवाज की तरफ देखा—वह लडकी चाबी म दरवाजा खोलकर धीरे से कमरे म आ गई थी। चाबी अभी उसके हाथ मे था।

"इजट इट टू अर्ली टु कम ?"[१] उसन पहले लडकी की तरफ देखा फिर खिडकी से बाहर आसमान की तरफ। उजाला अभी मुश्किल से फूटा ही था।

"आई एम एफ्रेड " लडकी की आवाज ढील भी गई और मभला भी और उसन कहा 'आई एम एफ्रेड इट इज टू लेट ' "

उसन फिर कुछ नहीं कहा।

लडकी जहा खडी थी, दरवाजे के पास, वही खडा रहा। शायद उसे लग रहा था कि वह जहा से चलकर इस कमरे तक आई थी, वह राह चलना उसके बस मे था पर अब अगली चुप को पार करना उसके बस म नही था

उसन हाथ म पकडे हुए काफी क प्याल को मेज पर रख दिया। कुछ कहना उसे स्वाभाविक नहीं लग रहा था, पर यह चुप भी उसे स्वाभाविक नहा लग रही थी। इसलिए उसने कहा, 'तुम बठो मैं

१ यह मेरा अपना आप है।

२ तुम क्या जल्दी नहीं आ गए ?

३ मेरा ख्याल है, बहुत देर हो चुकी है।

तुम्हारे लिए कॉफी का एक प्याला वना दू ।"

लडकी ने इनकार मे सिर हिलाया । उसके होंठ कुछ फडके, "पहले तुम हमेशा मुझे कॉफी वनाने के लिए कहते थे, आज···" पर यह आवाज नही आई । होठ एक वार हिले और फिर भिच गए ।

चावी अभी भी लडकी के हाथ मे थी ।

"यह चावी···" उसने एक वार लडकी की तरफ देखा, एक वार चावी की तरफ, और फिर कुछ कहना चाहकर भी नही कहा ।

"चावी को हाथ मे पकडकर नही आई, चावी का हाथ पकडकर आई हू" लडकी ने कहा । वड़ी सभली हुई आवाज में । शायद उसे अव लग रहा था कि अगर वह एक लम्वी राह चलकर इस कमरे तक आ सकती थी, तो अगली चुप को भी लाघ सकती थी ।

लडकी के और उसके वीच, आधे कमरे का फासला था । लड़की के मुह पर इस राह को झेलने की एक पीडा थी । पर यह राह उसे पार करनी थी—यह शायद पाच वरसो की सडक के आगे अचानक टूट गई सडक की राह थी

वह उसके पास आई । और वहुत नजदीक पहुचकर उसने अपने सिर को उसकी छाती से ऐसे लगाया—जैसे यहा तक पहुचते-पहुचते वह वहुत थक गई थी ।

उसने पास रखे मेज की तरफ हाथ वढ़ाया और एक सिगरेट पकड़ा । सिगरेट को जलाने लगा था कि लड़की ने उसका हाथ पकड़ लिया ।

लडकी ने कहा कुछ नही, पर उसके होठो पर जो कुछ था उसे वह सुन सकता था ।

पहले वह जव भी सिगरेट जलाता था, वह उसका हाथ पकड लेती थी । कहा करती थी "निकोटीन पीनी है ? मेरे होठो मे भी निकोटीन

है।

आज लड़की ने सिफ हाथ पकडा था, कहा कुछ नहीं था। पर जो कुछ उसने कहा नही था उस वह सुन सकता था।

उसे हसी सी आ गई कहन लगा—"मेरा ख्याल है, मेरे लिए सिगरट की निकाटीन ही काफी है।

लड़की क होठो म स नही छाती म से एक नि श्वास निकला—तुम मुझे कभी माफ नही करोगे?

'तुमने कोई कसूर किया है मैंने यह कभी नहीं साचा। उसन जवाब दिया।

पर तुम जाने से पहल जा थे, आकर वह नहीं रह। तुम्हार पीछे जो कुछ हुआ था वह सिफ तुम्हें बताना था बता दिया। पर तुम उसा दिन स वह नहा। लडकी का आवाज बहुत थकी हुई थी। एक गहरा सा सास लेकर कहने लगी तुम्हे याद है तुम कहा करत थे कि तुम जलत हुए कोयल जसा हो '

वह कहन लगा, 'मैं यह भा कहता था कि मैं कोयल को नहा आग की लपट का पकडना चाहता हू। लपट कभा पकडी नहा जाती, इसलिए म कुछ भा नही चाहता। मैंन कभी कुछ चाहा ही नहा, इसलिए जा और कोई तुम्ह अच्छा लगा

लडकी तडप-सी गई। कहन लगी— तुमने कभी कुछ चाहा नहा था, इसलिए मैंन साचा जिसने चाहा वह ठीक था। पर सिफ किसी दूसरे का चाहना काफी हाता है'

'मैं तुम्हारे साथ लगती थी तो जलत कायल जसी हो जाती थी, पर उसके साथ, किसी और क साथ लगकर मुझे लगा मैं बुझे हुए कोयल जसी हो गई थी

वह अब भी चुप था। उसका जिस्म भी अडाल था। पर उसकी

बाह काप-सी गई। बाह जैसे जिस्म का हिस्सा नही थी। और वह लडकी की पीठ के गिर्द एक सहारे की तरह लिपट गई।

"अब मैं सिर्फ जलता कोयला नही, आग की लपट हू"—लडकी ने सुलगकर और जलकर कहा।

वह हंस दिया। कहने लगा—"पर लपट कभी पडकी नही जाती।"

लडकी मे एक तपिश थी। कहने लगी—"वह बचपन था जब पकडी नही जाती थी। तुम लपट को चिमटे से पकडते थे। चिमटे से लपट नही पकडी जाती। लपट सिर्फ लपट से पकडो जाती है"

वह पैरो के तलुओ तक कांप-सा गया। और उसे लगा—उसके मन में से एक लपट निकलकर, उस लडकी के मन मे से निकलती लपट के साथ मिलती, उसे अपने हाथो में पकड रही थी ··

लडकी के होठो मे पता नही निकोटीन था कि शहद। जो भी था, उसको लगा, उसे उसीकी जरूरत थी।

और उन दोनो ने देखा, उनके पैरो के आगे जो सडक टूट गई थी, अब वह टूटी हुई नही थी।

❀ ❀ ❀